# रेल रंजनी

सितंबर 2024 अंक 104

## सवारी डिब्बा कारखाना
चेन्नै - 600 038

# 15 अगस्त 2024 को 78वें स्वतंत्रता दिवस समारोह हर्षोल्लास के साथ मानाया गया, समारोह की कुछ झलकियाँ

# रेल रंजनी

सितंबर 2024 | त्रैमासिक गृह-पत्रिका | अंक 104

**संरक्षक**

**यू. सुब्बा राव**
महाप्रबंधक

**मुख्य संपादक**

**प्रमोद कुमार गुप्ता**
मुख्य सामग्री प्रबंधक/बिजली
एवं मुख्य राजभाषा अधिकारी

**संपादक**

**ब्रजेन्द्र कुमार सिंह**
उप मु.सा.प्र./यां./फर. एवं
वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी

**सह-संपादक**

**सच्चिदानन्द हेम्बरम**
वरिष्ठ अनुवादक

**संपर्क**

राजभाषा अनुभाग
फर्निशिंग डिवीजन
सवारी डिब्बा कारखाना
चेन्नै 600038
रेलवे फोन : 044-26146373
ई-मेल : sra.icf@gmail.com


| | | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|
| भावनात्मक बुद्धिमत्ता : सफलता का नया मापदंड | अनिल सिद्धार्थ | 5 |
| क्रिकेट में अंडे, स्कूल में डंडे | के.राम भरोसे | 6 |
| संत कबीर दास | इन्दिरा श्रीनिवासन | 7 |
| पटना कलम चित्रकला | विकास कुमार | 10 |
| बेलूर मठ | सोनू सिंह | 12 |
| वीर सपूत उधम सिंह | शिवशंकर मीना | 14 |
| देश की मेरे शान बढ़ाए वंदे भारत | रिजवानूल हक खां | 15 |
| लड़ो | 'साभार' | 15 |
| झारखंड की महिला स्वतंत्रता सेनानी | सच्चिदानन्द हेम्बरम | 16 |
| यह कदम का पेड़ | सुभद्रा कुमारी चौहान | 17 |
| प्राचीनतम विश्वविद्यालय | 'साभार' | 18 |
| अनपढ़ ही रहता - माता-पिता की सेवा करता | मोनू कुमार | 25 |
| किसको नमन करूँ मैं भारत | रामधारी सिंह दिनकर | 29 |
| बाबा बैद्यनाथ मंदिर | रजनीकांत मिश्र | 30 |
| योग क्या है | 'साभार' | 32 |
| सडिका का 75000वाँ कोच | 'संकलन' | 36 |


**मुख पृष्ठ : सवारी डिब्बा कारखाना निर्मित 75000वाँ कोच**

**पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित रचनाकारों के हैं तथा संपादक मंडल का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।**

**यू. सुब्बा राव**
**महाप्रबंधक**

**सवारी डिब्बा कारखाना**
**चेन्नै**

## संदेश

यह अत्यंत प्रसन्नता की बात है कि सवारी डिब्बा कारखाना के राजभाषा विभाग द्वारा हिंदी गृह-पत्रिका 'रेल रंजनी' के 104वीं अंक का प्रकाशन किया जा रहा है। गृह-पत्रिका का प्रमुख उद्देश्य अपने यहाँ होने वाली महत्वपूर्ण गतिविधियों को पाठक तक पहुँचाना होता है।

'रेल रंजनी' के पाठकों को यह जानकारी देते हुए मुझे आपार हर्ष का अनुभव हो रहा है कि भारतीय रेल की अग्रणी उत्पादन इकाई सवारी डिब्बा कारखाना ने भारत की पहली स्वदेशी सेमी हाई स्पीड ट्रेन सेट जैसे वंदे भारत एक्सप्रेस का सफलतापूर्वक विनिर्माण किया है जो प्रमुख शहरों के बीच तेज कनेक्टिविटी प्रदान करती है। यही नहीं, सवारी डिब्बा कारखाना ने 75000वाँ कोच बनाकर महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल किया है। यह कोच वंदे भारत ट्रेनसेट के 69वें रेक का हिस्सा है।

सवारी डिब्बा कारखाना नवीनतम तकनीक, सौंदर्य और गुणवत्ता का ख्याल रखते हुए वंदे भारत कोच के विभिन्न प्रकारों जैसे वंदे मेट्रो कोच, वंदे स्लीपर कोच का विनिर्माण करने के लिए भी तैयार है।

हिंदी गृह-पत्रिका 'रेल रंजनी' का प्रकाशन हमेशा नए रूप में होता रहे यही मेरी शुभकामनाएँ है। 'ग' क्षेत्र में होने के बावजूद हिंदी गृह-पत्रिका का निरंतर प्रकाशन सराहनीय प्रयास है।

जय हिंद।

*****

**प्रमोद कुमार गुप्ता**
**मुख्य सामग्री प्रबंधक/बिजली**
**एवं**
**मुख्य राजभाषा अधिकारी**

**सवारी डिब्बा कारखाना**
**चेन्नै**

# संदेश

यह सहज और स्वभाविक है कि प्रत्येक जन-मानस को अपनी मातृभाषा से मोह रहता है। यह अकाट्य सत्य है कि हिंदी भाषा देश को एक सूत्र में बांधे रखने में सक्षम है। भाषा व्यक्ति के संस्कार से जुड़ी होती है। प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व का आईना उसकी भाषा होती है।

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि हिंदी एक जानदार भाषा है और वह जितनी बढ़ेगी, देश का उतना ही विकास होगा। भारत का संविधान में भी यह प्रावधान किया गया है कि इस सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में हिंदी का प्रचार-प्रसार किया जाए।

'रेल रंजनी' पत्रिका के 104वी अंक सुधी पाठकों तक पहुँचाने में हमें अत्यंत खुशी हो रही है। इस अंक में सवारी डिब्बा कारखाना के कर्मचारियों की लेख, कविता के साथ-साथ अन्य रचनाओं को भी शामिल किया गया है। आशा है यह अंक आपको रूचिकर लगेगा।

धन्यवाद।

*****

**ब्रजेन्द्र कुमार सिंह**
**उप मुसाप्र/यां/फर.**
**एवं**
**वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी**

**सवारी डिब्बा कारखाना**
**चेन्नै**

## संदेश

यह सर्वविदित ही है कि भारत बहुभाषी देश है, फिर भी भारत की संस्कृति और सभ्यता हिंदी में बसती है। हिंदी भाषा की सहजता एवं सरलता के कारण हिंदी भाषा अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दों को यथावत आत्मसात करने में सक्षम है।

केन्द्र सरकार के कार्यालयों के दिन-प्रतिदिन के कार्यों में सरल और सहज हिंदी का प्रयोग करने हेतु केन्द्रीय सरकार द्वारा आदेश भी पारित किया गया है। इसका उद्देश्य राजभाषा के प्रचार-प्रसार करने के साथ-साथ शासन को जनता से जोड़ना भी है।

'रेल रंजनी' के लिए सामग्रियों को संग्रह करते समय इस बात का ख्याल रखा जाता है कि पत्रिका में उपलब्ध कराई जाने वाली सामग्री सबके लिए उपयोगी हो।

मुझे आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि यह पत्रिका राजभाषा के प्रचार-प्रसार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। पत्रिका को और अधिक रूचिकर और सार्थक बनाने के लिए आपके बहुमूल्य सुझाव आमंत्रित हैं।

सादर।

*****

# भावनात्मक बुद्धिमत्ता : सफलता का नया मापदंड

✍ **अनिल सिद्धार्थ**
मुख्य बिजली इंजीनियर (सा.)

**भावनात्मक बुद्धिमत्ता** ( इमोशनल क्वेश्चन्ट या EQ) का मतलब है अपनी और दूसरों की भावनाओं को समझने, उनका प्रबंधन करने और उनका उपयोग करने की क्षमता।

मानवीय समाज में सफलता के लिए सिर्फ बुद्धिमानी (IQ) का होना ही काफी नहीं होता बल्कि उसे सही तरीके से अपनी भावनाओं को समझना और नियंत्रित करना भी आवश्यक है। इसी कड़ी में, 'भावनात्मक बुद्धिमानी' यानी Emotional Quotient (EQ) नामक नया मापदंड प्रचलित हो रहा है। यह व्यक्ति के भावनात्मक संज्ञान, समझदारी, और संवेदनशीलता की प्रासंगिकता को मापने का एक मानक है। यह कार्यस्थल पर बेहद महत्वपूर्ण है क्योंकि यह प्रभावी संचार, टीम वर्क, नेतृत्व और तनाव प्रबंधन में मदद करता है।

बुद्धिमानी (IQ) की तरह ही, भावनात्मक बुद्धिमानी भी व्यक्ति के सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह उसकी क्षमता होती है अपनी और दूसरों की भावनाओं को समझने और उसके साथ ठीक तरीके से व्यवहार करने की। एक व्यक्ति जो अपने भावनात्मक बुद्धिमानी में मजबूत होता है, वह तनाव, असमंजस, और ट्रांजिशनल स्थितियों के सामना करने में अधिक सफल होता है।

भावनात्मक बुद्धिमानी को विकसित करने के लिए व्यक्ति को स्वयं को पहचानने, अपने संवेदनाओं को समझने, और सही विचारधारा विकसित करने की आवश्यकता होती है। इसके लिए समाज में उचित शिक्षा, प्रेरणा, और व्यक्तिगत समृद्धि के लिए उपयुक्त माहौल अत्यंत आवश्यक होता है।

**कार्यस्थल पर भावनात्मक बुद्धिमत्ता**

**कार्यस्थल पर भावनात्मक बुद्धिमत्ता के लाभ :**

- **बेहतर संचार :** भावनाओं को समझने से आप दूसरों से प्रभावी ढंग से बात कर सकते हैं।
- **मजबूत संबंध :** दूसरों की भावनाओं को समझने से आप उनके साथ अच्छे संबंध बना सकते हैं।
- **बेहतर टीम वर्क :** आपकी सहानुभूति और समझ टीम को मजबूत बनाती है।
- **अच्छा नेतृत्व :** लोग ऐसे नेताओं का पालन करते हैं जो उनकी भावनाओं को समझते हैं।
- **तनाव प्रबंधन :** भावनाओं को नियंत्रित करने से आप तनाव को कम कर सकते हैं।

## कार्यस्थल पर भावनात्मक बुद्धिमत्ता बढ़ाने के तरीके :

- **स्वयं जागरूकता:** अपनी भावनाओं को पहचानें और समझें।

- **सामाजिक कौशल :** दूसरों की भावनाओं को समझने की कोशिश करें।
- **आत्म-नियमन :** अपनी भावनाओं को नियंत्रित करें।
- **सहानुभूति :** दूसरों की भावनाओं को समझने की कोशिश करें।
- **मोटिवेशन :** खुद को और दूसरों को प्रेरित करें।

**अतः** भावनात्मक बुद्धिमानी न केवल व्यक्ति के व्यक्तित्व में संतुलन और स्थिरता लाती है, बल्कि समाज में समर्थ और सकारात्मक योगदान के रूप में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। **भावनात्मक बुद्धिमत्ता** वाले लोग समुदाय के विकास में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। वे सहयोग, सहानुभूति और समझदारी के साथ काम करते हैं और इसके माध्यम से संघर्षों को शांतिपूर्ण तरीके से सुलझा सकते हैं, इस से समाज में **समावेशिता** की भावना सुनिश्चित होती है। इसी सोच के साथ, भावनात्मक बुद्धिमानी को समझना और उसे विकसित करना हर व्यक्ति के लिए आवश्यक है, ताकि वह अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में सफल हो सके।

---

# संत कबीर दास

✍ **इन्दिरा श्रीनिवासन**
सेवानिवृत्त रा.भा.अधिकारी

भारत में भक्ति काल के महान कवियों में संत कबीर दास का विशेष स्थान है। वे निर्गुण शाखा के ज्ञानमार्गी कवि है। वे ईश्वर को किसी मूर्ति के रूप में नहीं पूजते हैं। बल्कि उनको सर्वोच्च परमात्मा के रूप में देखते हैं।

उन्होंने सार्वजनिक जीवन में होने वाली कुरीतियां अंधविश्वास प्रथा आदि से परे, ईश्वर को सच्चे रूप में समझने की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्हें हिंदू धर्म, इस्लाम और सिख धर्मों में मुख्य कवि के रूप में जाना जाता है। उनकी रचनाएं सिखों के 'गुरू-ग्रंथ' साहिब में सम्मिलित हुई है। वे सूफी कवि माने जाते हैं। वे काशी के संतराम दास के शिष्य थे। उन्हीं से कबीरदास को 'राम-राम' का मंत्रोपदेश मिला।

कबीर पंथ एक अलग धर्म नहीं है बल्कि एक अध्यात्मिक दर्शन है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने कहा है कि कबीर जो 'राम-राम' कहते थे वे रमायण के राम नहीं बल्कि सर्वव्यापी परब्रहम / परमात्मा है जिसे ईश्वर माना जाता है। कबीर के ईश्वर निर्गुण / निराकार है। वे एक अध्यात्मिक कवि है इसलिए उन्हें संत कहा जाता है।

उनके दोहे हमारे जीवन के लिए प्रेरणादायक है। उन्होंने अध्यात्मिकता के साथ-साथ अहिंसा, शांति, आपसी मेल-मिलाप, सद् विचार आदि पर अपनी रचनाओं में विशेष रूप से उल्लेख किया है। उनके दोहे हमें जीवन जीने का राह दिखलाते हैं। अच्छे मनुष्य बनने एवं सदभाव रखने में उनकी रचनाएं मार्गदर्शक है।

आइए कबीर दास के कुछ दोहों पर प्रकाश डालें जो हमें जीवन के लिए सही मार्ग दर्शन में सक्षम है। उनके दोहों के साथ-साथ मैंने आदि शंकराचार्य के कुछ पदों का भी उल्लेख किया है। दोनो भक्ति मार्ग के अलग-अलग शाखाओं के कवि होने के बावजूद उनके विचारों में साम्यता है। उसे उल्लेख करने का प्रयास मैंने किया है।

ईश्वर का निरंतर ध्यान करना चाहिए कबीर दास जी कहते हैं

1. दु:ख में सुमिरन सब करे, सुख में करे न कोय।

जो सुख में सुमिरन करे, दुख काहे को होय।।

मनुष्य का स्वभाव है कि जब भी कठिनाइयां होती है तो अवश्य ईश्वर का ध्यान करते हैं ताकि उसे कठिनाई या मुसीबत से राहत मिले। कबीर दास जी का कहना है कि ईश्वर का ध्यान सतत होना चाहिए ना कि केवल दुख या कठिनाई के समय पर। यदि ईश्वर ध्यान निरंतर रहे तो दुख ही नहीं होगा।

2. एक और दोहे में कहते हैं कि:

सात समुद्र की मसि करो, करो लेखनी सब बनराई। धरती सब कागद करो, हरि गुण लिखा न जाए।।

अर्थात सातों समुद्रों को स्याही बना लूँ तथा समस्त वन समूह को लेखनी कर लूँ और पूरी पृथ्वी को कागज कर लूँ तब भी परमात्मा के गुणों को लिखा नहीं जा सकता। क्योंकि परमात्मा अनंत गुणों से युक्त है। इसलिए हमें उनका ध्यान अविच्छिन्न / अटूट होना चाहिए।

इसी विषय को आदि शंकराचार्य कहते हैं:

योगरतो वा भोगरतो वा, संगरतो वा

संगविहीन। यस्य ब्राह्मणी रमते चिंतम नन्दती, नन्दती नन्दत्येव।।

अर्थात मनुष्य योगी हो या भोगी हो वह सत्संग में हो या सत्संग-रहित हो, यदि उसका मन परब्रह्म में निरंतर लगा रहे तो वह अत्यंत आत्म संतुष्टि प्राप्त करता है।

जीवन में गुरु की आवश्यकता और उनकी महिमा पर विशेष रूप से कबीर एवं शंकराचार्य उल्लेख करते हैं। यह कबीर दास का एक सुप्रसिद्ध दोहा है

3. गुरु-गोविंद दोउं खड़े, काके लागू पाय।
बलिहारी गुरु आपकी, गोविंद दियो बताय।।

कबीर कहते हैं कि यदि हमारे सम्मुख हमारे गुरु और ईश्वर दोनों आ जाए तो किसकी पूजा पहले करनी चाहिए। गुरु को ही वरिष्ठ मानना चाहिए क्योंकि वे ही हमें ईश्वर प्राप्ति का मार्गदर्शन करते हैं। इस भावना का विस्तार नीचे के दोहे में करते हैं:

4. कबीरा नर अंध है, गुरु को कहते और।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर।।

कबीर दास का कहना है कि बे नर अंधे हैं जो गुरु को भगवान से छोटा मानते हैं। उनका कहना है कि यदि ईश्वर रूठ जाए तो गुरु उस परिस्थिति को सुलझा देंगे। परंतु यदि गुरु रूठ जाए तो हमारे पास और कोई विकल्प ही नहीं है। हम किसी और का सहारा नहीं ले सकते हैं।

ये विचार आदि शंकराचार्य की सोच से मेल खाते हैं। शंकराचार्य जी कहते हैं:

"गुरुचरणाबुज निर्भर भक्त: संसाराद चिराद भव भक्त:।

अर्थात गुरु के पद कमलों में आस्था रखने वाले भक्त इस संसार के कष्टों से सदा के लिए मुक्त हो जाते हैं और अपने हृदय के भीतर विराजमान ईश्वर को देखते हैं। (शंकराचार्य कहते हैं - दृक्ष्यसि) उसकी अनुभूति होती है - अनुभव करते हैं।

5. कुछ अन्य दोहे जो विशेष महत्व रखते हैं
लूट सके तो लूट ले राम नाम की लूट।
पीछे फिर पछताओगे प्राण जाए जब छूट।।

कबीर दास कहते हैं कि राम नाम का जप निरंतर करते रहो क्योंकि पता नहीं कब प्राण निकल जाएंगे। उसके बाद पछताने से कोई लाभ नहीं। यहां राम का उल्लेख कबीर दास परमात्मा के प्रति कहते हैं और न कि किसी ईश्वर को। उनके अनुसार नाम - स्मरण आत्म - शुद्धि का संसाधन है जब आत्मा शुद्ध हो जाता है तो मनुष्य सुधरता है और उसके जीने का लक्ष्य बदलता है।

आदि शंकराचार्य भी अपने "भज-गोविंदम" नाम के मूढ़ स्तोत्र-माला में कहते हैं -"भज-गोविंदम् भज गोविंदम्" अर्थात आम आदमी को संबोधित करते हुए कहते हैं - हे मूढ़ बुद्धि वाले मनुष्य। हमेशा गोविंद का नाम स्मरण करते रहो। इस संसार रूपी सागर को पार करने के लिए नाम स्मरण के अलावा अन्य कोई उपाय नहीं है।

शंकराचार्य और कबीर दास में अंतर इतना ही है कि कबीर निर्गुण में आस्था रखते हैं और शंकराचार्य सगुणवादी है। परंतु दोनों का उपदेश एक समान है।

6. इसी को कबीर दास अपने एक और दोहे में कहते हैं क्या भरोसा देह का, बिनस जात छिन्न माटीं। सांस सांस सुमिरन करो / और यतन कुछ नाह।।

अर्थात इस देह का क्या भरोसा - वह तो क्षण में नष्ट हो सकता है। इसलिए हर सांस में उस परब्रह्म का ध्यान अटूट रहना चाहिए।

शंकराचार्य कहते हैं कि - "नामस्मरणात अन्य उपाय नहि पश्यामो भवतरणे" - अर्थात इस संसार रूपी सागर को पार करने के लिए नाम स्मरण के अलावा अन्य कोई उपाय दिखाई नहीं देता। अर्थात निरंतर नाम जप ही एकमात्र उपाय है।

7. एक और अन्य दोहे में कबीर कहते हैं

काल करे सो आज कर, आज करे सो अब।

पल में प्रलय होगा बहुरि करेगा कब।।

मनुष्य जीवन बहुत छोटा है और अनित्य भी है। उसमें हमें अपने प्रयासों को यथाशक्ति शीघ्र करनी चाहिए। कल का काम आज और आज का काम अभी तुरंत करना चाहिए। क्योंकि हमारे जीवन का कोई भरोसा नहीं है और वह कभी भी समाप्त हो जाएगा।

शंकराचार्य भी यही कहते हैं कि संसार मायामयी है और उसका अंत कभी भी हो सकता है।

"मयामयम इदम अखिलम हित्वा ब्रह्मपदं त्वं प्रविश विदित्वा।" इसलिए परब्रह्म के चरणों में अपने को सौंप दो।

8. इस संदर्भ में कबीर दास और भी कहते हैं

रात गंवाई सोय के, दिन गंवाई खाय के।

हीरा जनम अनमोल था, कौडी बदले जाए।।

अर्थात रात सोकर बिता दिया और दिन में खाने में ध्यान रही। हीरे जैसे इस अनमोल जीवन को कौड़ियों ऑडियो में बदल दिया।

9. आगे कहते हैं:

"दुर्लभ मनुष्य जन्म है, हेह न बारंबार।

तरूवर जो पत्ती जड़े, बहुरि न लगे डार।।

यह मनुष्य जीवन अनमोल है। हमें पता नहीं कि हमारे अगले जन्म में हम क्या होंगे - पेड़, पक्षी या मानव या जानवर। शंकराचार्य भी कहते हैं - "पुनरपि जननम्, पुनरपि मरणम्"।

अर्थात जन्म-मृत्यु का पहिया घूमता रहेगा और हमें यह जानकारी नहीं है कि हमारा अगला जन्म मनुष्य जीवन होगा या नहीं। इसलिए इस जीवन का सदुपयोग करना चाहिए। कबीर कहते हैं कि जैसे पेड़ से पत्ते झड़कर गिर जाने पर वे फिर पेड़ पर नहीं लगते। हमारा जीवन भी इसी तरह है।

इस प्रकार आध्यात्मिक दृष्टिकोण में मनुष्यों को सतर्क करने के साथ-साथ उन्हें आम जीवन में अपनाने के लिए आवश्यक गुणों का भी कबीरदास उल्लेख करते हैं।

10. "बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर।

पंथी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर।।"

खजूर का पेड़ बहुत ऊंचा होता है उसके पत्तों से छाया नहीं मिलती है और उसी तरह उसके फल भी आसानी से तोड़ा नहीं जा सकता है। इसी प्रकार मनुष्य जितना भी बड़ा व्यक्ति हो, उसमें विनम्रता होनी चाहिए। अगर हम किसी का भला नहीं करते हो तो हमारे बड़े होने का अर्थ ही नहीं है। मन में दया, सच्चाई आदि गुण होने से ही इंसान बड़ा होता है नहीं तो वह खजूर के पेड़ के बराबर है।

11. आगे कबीर कहते हैं

"ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोये।

औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय।।"

मनुष्य को हमेशा सुखद वाणी बोलनी चाहिए, जो सामने वाले को दु:ख न पहुंचाए और उसे शांति प्रदान करे। इससे खुद को भी शांति मिलती है।

अत: मैं कबीर के इस दोहे के साथ में अपना लेख समाप्त करना चाहती हूं।

12. "बुरा जो देखन मैं चला, बुरा ना मिलिया कोय।

जो दिल खोजा अपना, मुझसे बुरा न कोय।।"

कबीर कहते हैं कि मैं हर जगह बुरे व्यक्ति की खोज में निकला परंतु मुझे कोई भी बुरा व्यक्ति नहीं मिला क्योंकि हर एक में कोई न कोई सद् गुण दिखते थे। जब मैंने अपना विश्लेषण किया तो पता चला कि मेरे से कोई और बुरा ही नहीं है। मेरे में कई अवगुण मौज़ूद थे।

इस दोहे का भावार्थ है कि हमें अपने गुणों पर विचार करना चाहिए और दुर्गुणों को सुधारना चाहिए। तभी हम अच्छा इंसान बन सकते हैं।

# पटना कलम चित्रकला

✍ **विकास कुमार**
कार्यालय अधीक्षक

कला, कलाकारों के हृदय से निकला हुआ एक दर्पण है जो उस समय समाज में हो रही सारे गतिविधियों को आम जनता के समक्ष प्रस्तुत करने का कार्य करता है। जब मानव हृदय में विचार कौंधती है तो वह स्वत: किसी न किसी माध्यम से बाहर आ जाता है, उसी में से एक चित्रकला है।

यह बेजुबान होते हुए भी कलाकारों की दिलों की बात आम जनता तक पहुँचाती है। कलाकार की कल्पना शक्ति समाज की सभी बारीकियों को समझाती है। जब कला एवं चित्रकला की बात आती है तो बिहार का इतिहास समृद्ध और विविध है।

कला के क्षेत्र में बिहार का इतिहास प्राचीन कला से ही समृद्ध एवं गौरवमय रहा है। इन क्षेत्रों में कई कला एवं चित्रकला फले-फूले एवं विकसित हुए। इनमें से एक है "पटना कलम"।

'पटना कलम' बिहार के सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास के निर्माण के एक समृद्ध स्रोत है।

ऐसा कहा जाता है कि पटना कलम के कलाकार मुगल कलाकारों के वंशज थे। जब मुगलों का पतन प्रारंभ हुआ तो इन कलाकारों की भी आर्थिक स्थिति चरमराने लगी एवं इसे मुगलों का संरक्षण नहीं मिल पा रहा था। इन कलाकारों ने अपने नए संरक्षकों की खोज में देश के अलग-अलग भागों में पलायन करना प्रारंभ किया।

कलाकार अपनी उत्पति राजस्थान से मानते हैं जहॉ से वे दिल्ली चले गए और वहॉ से मुर्शीदाबाद।

ऐसा प्रतीत होता है कि यह कलाकार 1730 ई. के आस-पास मुर्शीदाबाद पहुँचे। क्योंकि उस समय यह स्थान पूर्वी भारत का वाणिज्य केन्द्र बन रहा था। इसलिए यह एक आकर्षक केन्द्र प्रतीत हुआ जो कलाकारों को अपनी ओर आकर्षित किया। कालांतर में ये कलाकार गंगा नदी के किनारे बालूचक नामक स्थान पर बस गए। उन्होंने नवाब के महल की दीवारों को सजाने और शहर में बसे भारतीय और यूरोपीय उपनिवेशों के चित्र बनाने का काम किया।

लगभग 25 से 30 वर्षों तक मुर्शीदाबाद ने कलाकारों को उनके काम के लिए आय एवं वस्तुएं प्रदान की। लेकिन 1750 ई. के दशक से स्थितियां बदलने लगी। 1757 ई. में नवाब मीरजाफर बंगाल निजामत के उत्तराधिकारी बने और अपने बेटे मोहम्मद सादिक खान (मीरान) को बंगाल, बिहार और उड़ीसा के राजस्व संग्रह का प्रभारी बनाया। मीरान एक योग्य लेकिन निर्दय प्रशासक थे। इन्हीं के आतंक से कलाकारों का पटना की ओर प्रवासन हुआ। इस समय पटना एक समृद्ध शहर था। यह कलाकार समूह पटना शहर के मच्छरहट्टा, लोदी कटरा चौक और दीवान मोहले में आकर बस गए।

यह कला 20वीं शदी के शुरूआती वर्षों तक पटना में फली-फूली। पटना कलम के कुछ प्रसिद्ध

कलाकार थे - सेवकराम, शिवलाल, राधामोहन बाबू, ईश्वरी प्रसाद। पटना कलम में कुछ महिला चित्रकारों की कृतियों की भी चर्चा की गई है। दक्षो बीबी और सोना बीबी प्रसिद्ध है।

पटना कलम मुगल कला एवं यूरोपीय कला का एक मिश्रण है। इस शैली के कलाकार अपने स्वयं के ब्रश बनाते थे। इनके लिए कलाकारों ने घोड़े या गिलहरियों के बालों को पानी में उबाल कर कबूतर के पंखों को बांध कर आवश्यकतानुसार मोटाई के ब्रश तैयार करते थे। इन कलाकारों के बारे में एक आश्चर्यजनक बात यह भी है कि वे अपनी रचना में कभी-कभी केवल एक बाल वाले ब्रश का भी प्रयोग किया करते थे। ये कलाकार चित्र बनाने के लिए खुद का रंग तैयार किया करते थे। पीला रंग हरताल पत्थर को घिसकर तैयार किया जाता था। नीला रंग लेपिसलाजूली से, हरा रंग गेम्बोज एवं नीला के मिश्रण से, सफेद विशेष प्रकार की मिटटी से, काला रंग दीपक से, एवं सोना और चांदी के पत्तों से काला सोना और चांदी का रंग तैयार किया जाता था।

चित्रकला के इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ जब कलाकारों ने राजघरानों से निकलकर आम नागरिकों के जीवन को प्रदर्शित किया, जैसे मछली बेचने वाला, ढोलकवादक, भट्टी चलाते लोहार, पतंग बनाने वाला इत्यादि ने पटना कलम शैली को अन्य शैलियों से अलग एक पहचान देता है।

इन चित्रों में आकृतियों की चेहरे की विशेषताएं बहुत अलग थी। क्योंकि उनकी पतले चेहरे, नाक नुकीली, घनी भौवें, धसी हुई घुरती आंखें, और यदि चित्र पुरूषों की हो तो उनमें प्रमुख मुछें।

पटना कलम आम लोगों के जीवन में बसने के बावजूद अपने अस्तीत्व को बचा नहीं सका और निम्निलिखित कारणों से पतन की ओर चल पड़े।

<u>प्रेस की स्थापना</u> - अंतर्देशीय भारत में लिथोग्राफिक प्रेस पटना अफीम एजेंट द्वारा स्थापित किया गया जो पटना कलम को विदेशों में बेचने के लिए चित्रित करना शुरू कर दिया जो पटना कलम के चित्रकारों को बहुत प्रभावित किया।

<u>फोटोग्राफी का आगमन</u> - फोटाग्राफी कैमरों के आगमन का भी कलाकारों पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ा क्योंकि लोगों ने घरेलू चित्र के बजाय मुद्रित प्रतियां खरीदना पसंद करते थे जिससे इसका पतन होता रहा।

पटना के इन गौरवशाली, पवित्र धरती पर पटना कलम ने स्वर्णिम एवं अंधकारमय दोनों समय देखे। समृद्ध पटना कलम अपने यूग के अंतिम कलाकार ईश्वरी प्रसाद वर्मा के निधन के साथ समाप्त हो गया। इस शैली को आज भी पटना संग्रहालय, जालान संग्रहालय, चैतन्य पुस्तकालय, खुदा बक्श ओरिएंटल लाइब्रेरी में देखी जा सकती है। यह कला विक्टोरिया अल्बर्ट संग्रहालय लंदन में भी देखी जा सकती है। व्यवसायों, त्योहारों और स्थानीय जीवन के निर्माण के प्रतिष्ठा अर्जित करने से लेकर दक्षिण एशिया की चित्रात्मक परंपरा में एक अद्वितीय चरण का प्रतिनिधित्व किया।

कलाकारों द्वारा चित्रित की गई दृश्य कल्पना एक इतिहास के लिए एक बहुमूल्य स्रोत है क्योंकि वे पटना के समकालीन सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक इतिहास पर प्रकाश डालते हैं जो अंततः बिहार में कला कौशल के सुनहरे अतीत की बात करता है और उसी का दुनिया के सामने प्रदर्शित करता है।

# बेलूर मठ

✍ **सोनू सिंह**
कनिष्ठ लिपिक

**इतिहास :**

बेलूर मठ, जो पश्चिम बंगाल के हुगली जिले में स्थित है, भारतीय संत रामकृष्ण परमहंस द्वारा स्थापित एक प्रमुख धार्मिक और सांस्कृतिक केंद्र है। इसका निर्माण 1897 में स्वामी विवेकानंद ने किया था। बेलूर मठ रामकृष्ण मठ और रामकृष्ण मिशन का मुख्यालय है और यह एक महत्वपूर्ण स्थल है जहां स्वामी विवेकानंद ने भारतीय संस्कृति और वेदांत के शिक्षाओं का प्रसार किया।

स्वामी विवेकानंद ने बेलूर मठ को एक महत्वपूर्ण स्थान मानते हुए इसे एक ऐसे स्थान के रूप में विकसित किया जहां भक्ति, कर्म और ज्ञान के सिद्धांतों का अध्ययन और अभ्यास किया जा सके। मठ का निर्माण कार्य 1899 में शुरू हुआ और 1901 में पूरा हुआ। यहाँ स्वामी विवेकानंद के शिष्यों ने एक आश्रम की स्थापना की  जो अब एक प्रमुख धार्मिक और शैक्षिक केंद्र बन चुका है।

**महत्व:**

बेलूर मठ का महत्व कई दृष्टिकोणों से है:

1. **धार्मिक केंद्र :** बेलूर मठ स्वामी विवेकानंद और रामकृष्ण परमहंस की शिक्षाओं का प्रसार करता है। यहाँ वेदांत, योग और भारतीय संस्कृति के गहन अध्ययन और अभ्यास के लिए संसाधन उपलब्ध हैं।
2. **सांस्कृतिक संरक्षित स्थान :** यह स्थान भारतीय संस्कृति और धार्मिक परंपराओं को संरक्षित और प्रोत्साहित करता है। यहाँ विभिन्न सांस्कृतिक और धार्मिक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।
3. **शैक्षिक गतिविधियाँ :** मठ शिक्षा और समाज सेवा के विभिन्न कार्यक्रमों का संचालन करता है। इसके अंतर्गत स्कूल, अस्पताल और सामाजिक सेवा परियोजनाएं शामिल हैं, जो समाज के वंचित वर्गों की सहायता करती हैं।
4. **आध्यात्मिक प्रेरणा:** यह स्थान भक्तों और साधकों के लिए आध्यात्मिक प्रेरणा का स्रोत है। यहाँ पर आने वाले लोग शांति और आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए आते हैं।

बेलूर मठ न केवल एक धार्मिक स्थल है बल्कि यह भारतीय संस्कृति और समाज के उत्थान में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यहाँ की शांति और समर्पण का वातावरण लोगों को आत्मा की खोज में मार्गदर्शन प्रदान करता है।

चेन्नई से बेलूर मठ तक पहुँचने के लिए आप निम्नलिखित विकल्पों का उपयोग कर सकते हैं:

**1. ट्रेन से:**

❖ **चरण** 1: सबसे पहले, चेन्नई से कोलकाता की ट्रेन पकड़ें। चेन्नई से कोलकाता के बीच कई ट्रेनें उपलब्ध हैं,  जैसे कि **सुपरफास्ट ट्रेन**, **मेल ट्रेन**, या **एक्सप्रेस ट्रेन**।

❖ **चरण** 2: कोलकाता पहुँचने के बाद, **हुगली जिले** में बेलूर मठ जाने के लिए स्थानीय

ट्रांसपोर्ट का उपयोग करें। आप **ट्रेन** से बेलूर स्टेशन या **ऑटो-रिक्शा** से बेलूर मठ तक पहुँच सकते हैं।

**2. हवाई यात्रा से:**

❖ **चरण** 1: चेन्नई से कोलकाता के लिए फ्लाइट बुक करें। चेन्नई का **मीनाम्बक्कम हवाई अड्डा** (Chennai International Airport) और कोलकाता का **नेताजी सुभाष चंद्र बोस अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा** (Netaji Subhas Chandra Bose International Airport) के बीच नियमित उड़ानें उपलब्ध हैं।

❖ **चरण** 2: कोलकाता एयरपोर्ट से बेलूर मठ तक पहुँचने के लिए टैक्सी या कैब का उपयोग करें। आप कोलकाता रेलवे स्टेशन तक भी पहुँच सकते हैं और फिर वहाँ से बेलूर मठ तक ट्रेन या बस का उपयोग कर सकते हैं।

**बेलूर मठ के प्रवेश के समय:**

बेलूर मठ में प्रवेश करने का समय निम्नलिखित है:

❖ **सुबह :** 6:00 बजे से 11:00 बजे तक

❖ **दोपहर:** 4:00 बजे से 7:00 बजे तक

ध्यान दें कि ये समय सामान्य तौर पर होते हैं और कभी-कभी धार्मिक उत्सवों या विशेष अवसरों के दौरान समय में बदलाव हो सकता है। यात्रा करने से पहले आप मठ की आधिकारिक वेबसाइट या स्थानीय अधिकारियों से समय की पुष्टि कर सकते हैं।

बेलूर मठ में नवरात्रि के दौरान विशेष पूजा और अनुष्ठान किए जाते हैं, जो स्वामी रामकृष्ण परमहंस और माँ सारदा के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए होते हैं। नवरात्रि एक प्रमुख हिन्दू त्योहार है जो देवी दुर्गा की पूजा के लिए समर्पित होता है  और इसमें विशेष रूप से कन्याकुमारी पूजा भी की जाती है।

नवरात्रि के दिनों में  बेलूर मठ में देवी दुर्गा की पूजा विशेष धूमधाम से की जाती है। यहाँ पूजा के दौरान विभिन्न अनुष्ठान, आरती और भजन-कीर्तन होते हैं।

पूजा स्थल पर रंग-बिरंगे फूल, दीपक और नैवेद्य (भोग) अर्पित किए जाते हैं।

कन्याकुमारी पूजा विशेष रूप से नवमी तिथि को होती है, जब कन्याकुमारी (देवी कुमारी) की पूजा की जाती है। इस दिन मठ में विशेष अनुष्ठान और पूजा का आयोजन किया जाता है।

पूजा के दौरान मठ के पुजारी देवी कन्याकुमारी की आराधना करते हैं और भक्तों को आशीर्वाद देते हैं।

नवरात्रि के दौरान मठ में धार्मिक प्रवचन और सभा का आयोजन भी किया जाता है, जिसमें स्वामी विवेकानंद की शिक्षाओं और रामकृष्ण परमहंस के उपदेशों पर चर्चा की जाती है।

नवरात्रि के दिनों में मठ में भजन, कीर्तन और धार्मिक गीतों का आयोजन किया जाता है। यह भक्तों के लिए आध्यात्मिक अनुभव प्रदान करता है।

इस प्रकार बेलूर मठ में कन्याकुमारी पूजा और नवरात्रि के दौरान आपको एक दिव्य और आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त होगा।

# वीर सपूत ऊधमसिंह

✍ **शिवशंकर मीना**
सामान्य सहायक

वीर ऊधमसिंह का जन्म 26 दिसंबर 1899 को पटियाला राज्य के सुनाम कस्बे में हुआ था। उनके पिता का नाम टहलसिंह था।

ऊधमसिंह जब बच्चे थे तभी उनके सिर पर से माता-पिता का साया उठ गया। ऊधमसिंह और उनके बड़े भाई साधुसिंह अभी बहुत छोटे थे, जब उन पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा और वे अनाथ हो गए। उनके एक संबंधी ने दोनों भाइयों को अनाथालय में भेज दिया। कुछ दिनों के बाद उनके बड़े भाई का भी निधन हो गया। अब ऊधमसिंह का अपना कहने वाला कोई नहीं रहा। अनाथालय में रहकर ही उन्होंने काम करने के साथ-साथ पढ़ाई भी जारी रखी।

उन्हीं दिनों 'रोलट एक्ट' को लेकर बड़ा असंतोष फैला हुआ था। कई नेता इस संबंध में गिरफ्तार किए जा चुके थे। पंजाब में भी इसकी लहर बड़ी तेजी से दौड़ रही थी।

सन 1919 की 19 अप्रैल का दिन था। अमृतसर के जलियांवाला बाग में बैसाखी को मेला लगा था। मेले में 'रोलट एक्ट' को लेकर चर्चा हो रही थी। बाग में इसी संबंध में सभा आयोजन किया गया था। बूढ़े, जवान, स्त्री, बच्चे सभी इसमें शामिल होने आए थे। बाग लोगों से खचाखच भरा हुआ था।

उन दिनों अमृतसर की सेना का कमांडर जनरल डायर था और वह अत्यंत क्रूर स्वभाव का अंग्रेज था। जब उसे इस सभा का समाचार मिला तब उसके अंदर का शैतान जाग उठा। अपने सैनिकों को लेकर वह तुरंत ही बाग में आ पहुँचा।

जनरल डायर के आदेश पर सैनिकों ने बाग को चारों तरफ से घेर लिया और लोगों को बिना चेतावनी दिए अपने सैनिकों को निहत्थी जनता पर गोलियाँ बरसाने का आदेश दिया। सारा बाग खून से भर गया, बाग लाशों से पट गया। लोगों को बाग से निकलने का मौका ही नहीं मिला, क्योंकि उस बाग में एक ही दरवाजा था और उसी दरवाजे से जनरल डायर के सैनिक लोगों पर गोलियाँ बरसा रहे थे। इस हत्याकांड को भारतीय इतिहास में 'जलियांवाला हत्याकांड' के नाम से भी जाना जाता है।

वीर ऊधमसिंह ने स्वयं बाग में जाकर जब इस दृश्य को देखा तो उनकी आत्मा कराह उठी। न जाने कितने बेकसूर लोग मौत की गोद में सो गए थे। ऊधमसिंह की भुजाएं फड़क उठी। उन्होंने इस हत्याकांड का बदला लेने की प्रतिज्ञा की। वह मौके की तलाश में रहने लगे।

ऊधमसिंह का मन अंग्रेजों की सत्ता के अधीन रहने से उचट गया था। वह अमेरिका चले गए और वहाँ एक लकड़ी के कारखानों में काम करने लगे। अपने अथक परिश्रम और व्यवहार-कुशलता के कारण वह जल्दी ही उस कारखाने के हिस्सेदार बन गए।

कुछ दिनों बाद ऊधमसिंह भारत लौटे। पंजाब में वे क्रांतिकारियों के साथ सक्रिय रूप से काम करने लगे। एक दिन वह तांगे में बैठकर योजनानुसार कहीं जा रहे थे कि पुलिस को उन पर संदेह हो गया। वह गिरफ्तार कर लिए गए। तलाशी लेने पर उनके पास से पिस्तौल और गोलियाँ बरामद हुई। इस पर उन्हें चार वर्ष का कठोर कारावास मिला।

जेल से रिहा होने के बाद उन्होंने अपना नाम बदल लिया और 'राय मुहम्मद आजाद' के नाम से काम करने लगे। वह हिंदू और मुसलमानों को एक सूत्र में बांधना चाहते थे।

खुफिया पुलिस की उन पर कड़ी नजर थी। तभी उन्होंने भारत छोड़कर लंदन जाने का निश्चय किया। जलियांवाला बाग का असली हत्यारा जनरल डायर तब तक लंदन पहुँच चुका था। ऊधमसिंह को अपना प्रण पूरा करना था।

वह लंदन में छह-सात वर्ष रहे। पर डायर से उनकी मुलाकात नहीं हो पा रही थी। आखिर एक दिन वह भी आ ही गया, जिस दिन की ऊधमसिंह को प्रतीक्षा थी। वह दिन था सन 1940 का 12 मार्च, जब लंदन के कैस्ट्रन हॉल में मीटिंग हो रही थी और डायर भी उसमें उपस्थित था। वह अपने द्वारा कराए गए जलियांवाला बाग के क्रूर हत्याकांड का बड़ी शान के साथ वर्णन कर रहा था।

ऊधमसिंह पहले से ही वहां तैयार होकर पहुँचे हुए थे। जैसे ही डायर के मुंह से 'इंडियन डॉग' अर्थात 'भारतीय कुत्ते' शब्द निकला उन्होंने पांच-छह गोलियां चलाकर हत्यारे डायर को वहीं ढेर कर दिया। इस प्रकार इक्कीस वर्ष बाद उन्होंने अपना प्रण पूरा किया।

ऊधमसिंह पकड़ लिए गए। उन पर वहां की सरकार ने हत्या के अपराध का मुकदमा चलाया। 12 जून 1940 को लंदन में उन्हें फांसी दे दी गई। उन्हें मरने का जरा भी दु:ख नहीं था, क्योंकि उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर ली थी।

वाह रे वीर ऊधमसिंह। तेरे शौर्य की गाथाएँ पंजाब में ही नहीं बल्कि आज सारे भारत देश में चाव के साथ कही और सुनी जाती है। भारत के स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में इस वीर पुरुष का नाम सदैव अमर रहेगा।

## देश की मेरे शान बढ़ाये वन्दे भारत

**रिजवानुल हक खाँ**

मुख्य सामग्री प्रबंधक/ शेल

देश की मेरे शान बढ़ाये वन्दे भारत,
दिल में इक अरमान जगाये वन्दे भारत।
इसकी है रफ्तार अनोखी,
हम सबको इक ख्वाब दिखाये, वन्दे भारत।
सुविधा भी है और सुरक्षा भी,
दिल में इक विश्वास जगाये वन्दे भारत।
हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई,
सबको अपने पास बुलाये वन्दे भारत।
उत्तर दक्खिन पूरब पक्षिम,
सबके मन को ये भा जाये, वन्दे भारत।
खेत खलिहान हो दरिया या जंगल,
सरपट सरपट दौड़ी जाये वन्दे भारत।

## लड़ो

लड़ नहीं सकते, बोलो
बोल नहीं सकते, लिखो
लिख नहीं सकते, साथ दो
साथ नहीं दे सकते,
काम करने वालों का मनोबल बढाओ
यदि वो भी नहीं कर सकते हो,
जो कर रहे हैं, उनका मनोबल मत तोड़ो
क्योंकि वो तुम्हारे हिस्से की लड़ाई लड़ रहा है।

'साभार'

# झारखंड की महिला स्वतंत्रता सेनानी

✍ **सच्चिदानन्द हेम्बरम**
वरिष्ठ अनुवादक

भारत में हर साल 15 अगस्त को स्वतंत्रता दिवस के रूप में बड़े ही हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। फिलहाल देश 78वां स्वतंत्रता दिवस मना रहा है। अंग्रेजों की 200 साल की गुलामी सहने के बाद आखिरकार भारत को 15 अगस्त 1947 को आजादी मिली थी। आजादी पाने के लिए भारत के सभी तबके के लोगों ने एकजुट होकर संघर्ष किया था और कई वीर सेनानियों ने तो अपने प्राणों की आहुती भी दी थी। देश को आजाद कराने के लिए स्वतंत्रता आंदोलन में झारखंड की महिलाओं ने भी बढ़चढ़ कर भाग लिया था।

झारखंड पूर्वी भारत का एक राज्य है। यह अपने झरनों, पारसनाथ हिल के सुंदर जैन मंदिरों और बेतला राष्ट्रीय उद्यान के हाथियों और बाघों के लिए जाना जाता है। राज्य की राजधानी रांची में 17वीं शताब्दी का जगन्नाथ मंदिर, एक हिंदू मंदिर और झारखंड युद्ध स्मारक है। झारखंड की महिला स्वतंत्रता सेनानियों में निम्नलिखित महिलाओं की नामों को बहुत ही गौरव से लिया जाता है।

1. सरस्वती देवी - सरस्वती देवी का जन्म झारखंड में 5 फरवरी 1901 को हुआ था। इनके पिता राय विष्णु दयाल लाल सिन्हा संत कोलंबा महाविद्यालय में उर्दू, फारसी एवं अरबी भाषा के अध्यापक थे। सरस्वती देवी का विवाह मात्र तेरह साल की उम्र में हजारीबाग के दारू गांव के केदारनाथ सहाय (वकील) के साथ हुआ था। जिसके बाद सरस्वती देवी वर्ष 1916-17 में स्वाधीनता आंदोलन से जुड़ गई थी। वर्ष 1921 में गांधीजी के आह्वान पर सरस्वती देवी ने असहयोग आंदोलन में भी हिस्सा लिया था। जिसके लिए उन्हें गिरफ्तार कर हजारीबाग सेंट्रल जेल भेज दिया गया था। जेल से रिहा होने के बाद सरस्वती देवी फिर से देश की आजादी में पूरे प्राण-प्रण से लगी थी। देश को आजादी मिलने के बाद सरस्वती देवी ने जगह-जगह जाकर लोगों को मिठाई खिलाई थी। जिसके बाद 10 दिसंबर, 1958 को मात्र 57 वर्ष की उम्र में उनकी मृत्यु हो गई थी।

2. ऊषा रानी मुखर्जी - ऊषा रानी मुखर्जी को भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान गिरफ्तार कर 6 महीनों के लिए भागलपुर (बिहार) जेल में डाल दिया गया था। जेल से रिहा होने के बाद इन्होंने संताल परगना (झारखंड) से स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई थी।

3. राजकुमारी सरोज दास - राजकुमारी सरोज दास पलामू क्षेत्र से स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय थी। इन्होंने भारत छोड़ो आंदोलन के दौरान जपला सिमेंट फैक्ट्री में मजदूरों और किसानो को संगठित कर ब्रिटिश शासन के खिलाफ विद्रोह किया था।

4. बिरजी मिर्धा - बिरजी मिर्धा स्वतंत्रता सेनानी हरिहर मिर्धा की पत्नी थी। इन्होंने अपने पति के साथ मिलकर देश की आजादी के लिए भारत छोड़ो आंदोलन में भाग लिया था। इसी

वजह से अंग्रेजों ने 28 अगस्त 1942 को इन्हें गोली मारकर हत्या कर दी थी।

5. देवमनिया भगत - देवमनिया भगत गुमला जिले के बभुरी गांव की रहने वाली थी। ये जतरा भगत की समकालीन थी, इन्होंने देश की आजादी के लिए ताना भगत आंदोलन में नेतृत्व किया था।

6. फूलो मुर्मू और झानो मुर्मू - फूलो मुर्मू और झानो मुर्मू को संथाल विद्रोह तथा स्वतंत्रता संग्राम की महिला क्रांतिकारी के रूप में याद किया जाता है। फूलो मुर्मू और झानो मुर्मू चुन्नी मांझी की पुत्रियाँ थीं। इन दोनों का जन्म झारखंड राज्य के साहेबगंज जिले मे भोगनाडीह नामक गॉव में हुआ था। इन दोनों बहनों ने अपने क्रांतिकारी भाईयों सिदो मुर्मू और कान्हू मुर्मू के साथ कंधों से कंधा मिलाकर अंग्रेजों से मुकाबला किया। इन दोनों बहनों ने हाथ में तलवार तथा बरछा लेकर अंग्रेजों के छावनी में घूस गईं और कई अंग्रेज अधिकारियों को मौत का घाट उतार दिया। इन दोनों बहनों ने भी अंग्रेजों को ललकारा और कहा "अंग्रेजों हमारी भूमि छोड़ दो।" अपने भाईयों की तरह ही इन दोनों बहनों का नारा था "आबुआक् राज आबुवाक् दिशोम" (हमलोगों का राज, हमलोगों का देश)। बाद में अंग्रेजों ने इन दोनों बहनों को गिरफ्तार कर लिया और सरेआम फांसी पर लटका दिया।

इतिहास के पन्नों में आज भी झारखंड की महिला स्वतंत्रता सेनानी अजर-अमर हैं, भारत की आजादी के लिए इनकी शहादत को भुलाया नहीं जा सकता है।

## यह कदंब का पेड़

यह कदंब का पेड़ अगर माँ होता यमुना तीरे।
मैं भी उस पर बैठ कन्हैया बनता धीरे-धीरे
ले देतीं यदि मुझे बांसुरी तुम दो पैसे वाली।
किसी तरह नीची हो जाती यह कदंब की डाली।
तुम्हें नहीं कुछ कहता पर मैं चुपके-चुपके आता।
उस नीची डाली से अम्मा ऊँचे पर चढ़ जाता।
वहीं बैठ फिर बड़े मजे से मैं बांसुरी बजाता।
अम्मा-अम्मा कह वंशी के स्वर में तुम्हे बुलाता।
बहुत बुलाने पर भी माँ जब नहीं उतर कर आता।
माँ, तब माँ का हृदय तुम्हारा बहुत विकल हो जाता।
तुम आँचल फैला कर अम्मां वहीं पेड़ के नीचे।
ईश्वर से कुछ विनती करतीं बैठी आँखें मीचे।
तुम्हें ध्यान में लगी देख मैं धीरे-धीरे आता।
और तुम्हारे फैले आँचल के नीचे छिप जाता।
तुम घबरा कर आँख खोलतीं, पर माँ खुश हो जाती।
जब अपने मुन्ना राजा को गोदी में ही पातीं।
इसी तरह कुछ खेला करते हम-तुम धीरे-धीरे।
यह कदंब का पेड़ अगर माँ होता यमुना तीरे।

**- सुभद्रा कुमारी चौहान**

# प्राचीनतम विश्वविद्यालय

**'साभार'**

## 1. विक्रमशिला विश्वविद्यालय

**8वीं** शताब्दी में पालवंश के शासक धर्मपाल द्वारा बिहार प्रान्त के भागलपुर में विक्रमशिला विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। पूर्व मध्यकालीन भारतीय इतिहास में इस विश्वविद्यालय की स्थापना की गई थी। विक्रमशिला विश्वविद्यालय नालन्दा के समकक्ष माना जाता था। इसका निर्माण पाल वंश के शासक धर्मपाल (770 - 810 ईसा पूर्व) ने करवाया था। मध्यकालीन भारतीय इतिहास में इस विश्वविद्यालय का महत्त्वपूर्ण स्थान था। यहां पर बौद्ध धर्म एवं दर्शन के अतिरिक्त न्याय, तत्व ज्ञान एवं व्याकरण का भी अध्ययन कराया जाता था|

इस विश्वविद्यालय से सम्बद्ध विद्वानों में 'रक्षित', 'विरोचन', 'ज्ञानपद', बुद्ध, 'जेतारि', 'रत्नाकर', 'शान्ति', 'ज्ञानश्री', 'मित्र', 'रत्न', 'ब्रज' एवं 'अभयंकर' के नाम प्रसिद्ध है। इनकी रचनायें बौद्ध साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं।

इस विश्वविद्यालय के सर्वाधिक प्रतिभाशाली भिक्षु 'दीपंकर' ने लगभग 200 ग्रंथों की रचना की। इस शिक्षा केन्द्र में लगभग 3,000 अध्यापक कार्यरत थे। छात्रों के विषय में कोई स्पष्ट जानकारी नहीं मिलती। यहां पर विदेशों से भी छात्र अध्ययन हेतु आते थे। सम्भवतः तिब्बत के छात्रों की संख्या सर्वाधिक थी।

1203 ई. में बख़्तियार ख़िलजी के आक्रमण के परिणामस्वरूप यह विश्वविद्यालय नष्ट हो गया। इस सन्दर्भ में 'तबकाते नासिरी' से जानकारी मिलती है। सम्भवतः इस विश्वविद्यालय को दुर्ग समझ कर नष्ट कर दिया गया। विक्रमशिला के अतिरिक्त पाल नरेश (रामपाल) के समय (11वीं - 5वीं सदी में) 'ओदन्तपुरी' एवं 'जगदल्ल' में भी शिक्षा केन्द्र स्थापित किये गये थे। जगदल्ल विश्वविद्यालय तंत्रयान शिक्षा का प्रसिद्ध केन्द्र था।

इतिहासकार पंचानन मिश्र का कहना है कि नालन्दा विश्वविद्यालय में एक द्वार का पता चला है जबकि विक्रमशिला में छह द्वार थे। द्वार की संख्या छह होने का तात्पर्य है कि यहाँ पर छह विषयों की पढ़ाई होती थी जिनमें केवल तंत्र विद्या ही नहीं बल्कि भौतिकी, रसायन विज्ञान, धर्म, संस्कृति आदि शामिल थे। विक्रमशिला विश्वविद्यालय में लगभग दस हज़ार विद्यार्थियों की पढ़ाई होती थी और उनके लिए क़रीब एक सौ आचार्य पढ़ाने का काम करते थे। गौतम बुद्ध स्वयं यहाँ आए थे और यही से गंगा नदी पार कर सहरसा की ओर गए थे।

**बौद्ध धर्म का प्रचार**

दसवीं शताब्दी ई. में तिब्बत के लेखक तारानाथ के वर्णन के अनुसार प्रत्येक द्वार के पण्डित थे। पूर्वी द्वार के द्वार पण्डित रत्नाकर शान्ति, पश्चिमी द्वार के वर्गाश्वर कीर्ति, उत्तरी द्वार के नारोपन्त, दक्षिणी द्वार के प्रज्ञाकर मित्रा थे। आचार्य दीपक विक्रमशील विश्वविद्यालय के

सर्वाधिक प्रसिद्ध आचार्य हुए हैं। विश्वविद्यालयों के छात्रों की संख्या का सही अनुमान प्राप्त नहीं हो पाया है। 12वीं शताब्दी में यहाँ 3000 छात्रों के होने का विवरण प्राप्त होता है। लेकिन यहाँ के सभागार के जो खण्डहर मिले हैं उनसे पता चलता है कि सभागार में 8000 व्यक्तियों को बिठाने की व्यवस्था थी। विदेशी छात्रों में तिब्वती छात्रों की संख्या अधिक थी। एक छात्रावास तो केवल तिब्बती छात्रों के लिए ही था।

यहाँ से तिब्बत के राजा के अनुरोध पर दिपांकर अतीश तिब्बत गए और उन्होंने तिब्बत से बौद्ध भिक्षुओं को चीन, जापान, मलेशिया, थाइलैंड से लेकर अफ़ग़ानिस्तान तक भेजकर बौद्ध धर्म का प्रचार-प्रसार किया। विक्रमशिला विश्वविद्यालय में विद्याध्ययन के लिए आने वाले तिब्बत के विद्वानों के लिए अलग से एक अतिथिशाला थी।

विक्रमशिला से अनेक विद्वान तिब्बत गए थे तथा वहाँ उन्होंने कई ग्रन्थों का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया। विक्रमशिला के बारे में सबसे पहले राहुल सांस्कृत्यायन ने सुल्तानगंज के क़रीब होने का अंदेशा प्रकट किया था। उसका मुख्य कारण था कि अंग्रेजों के जमाने में सुल्तानगंज के निकट एक गांव में बुद्ध की प्रतिमा मिली थी। बावजूद उसके अंग्रेजों ने विक्रमशिला के बारे में पता लगाने का प्रयास नहीं किया। इसके चलते विक्रमशिला की खुदाई पुरातत्त्व विभाग द्वारा 1986 के आसपास शुरू हुआ। इस विश्वविद्यालय के अनेकानेक विद्वानों ने विभिन्न ग्रंथों की रचना की, जिनका बौद्ध साहित्य और इतिहास में नाम है।

## 2. तक्षशिला विश्वविद्यालय

भारत में दुनिया के पहले विश्वविद्यालय 'तक्षशिला विश्वविद्यालय' की स्थापना सातवीं शती ईसा पूर्व हो गयी थी। यह समय नालन्दा विश्वविद्यालय से लगभग 1200 वर्ष पहले था। 'तेलपत्त' और 'सुसीमजातक' में तक्षशिला को काशी से 2,000 कोस दूर बताया गया है। जातकों में तक्षशिला के महाविद्यालय की भी अनेक बार चर्चा हुई है। यहाँ अध्ययन करने के लिए दूर-दूर से विद्यार्थी आते थे। भारत के ज्ञात इतिहास का यह सर्वप्राचीन विश्वविद्यालय था। इस विश्वविद्यालय में राजा और रंक सभी विद्यार्थियों के साथ समान व्यवहार होता था। जातक कथाओं से यह भी ज्ञात होता है कि तक्षशिला में 'धनुर्वेद' तथा 'वैद्यक' तथा अन्य विद्याओं की ऊंची शिक्षा दी जाती थी।

**स्थापना**

तक्षशिला विश्वविद्यालय वर्तमान पश्चिमी पाकिस्तान की राजधानी रावलपिण्डी से 18 मील उत्तर की ओर स्थित था। जिस नगर में यह विश्वविद्यालय था उसके बारे में कहा जाता है कि श्री राम के भाई भरत के पुत्र 'तक्ष' ने उस नगर की स्थापना की थी। यह विश्व का प्रथम विश्वविद्यालय था जिसकी स्थापना 700 वर्ष ईसा पूर्व में की गई थी। तक्षशिला विश्वविद्यालय में पूरे विश्व के 10,500 से अधिक छात्र अध्ययन करते थे। यहां 60 से भी अधिक विषयों को पढ़ाया जाता था। 326 ईस्वी पूर्व में विदेशी आक्रमणकारी सिकन्दर के आक्रमण के समय यह संसार का सबसे प्रसिद्ध विश्वविद्यालय ही नहीं था, अपितु उस समय के 'चिकित्सा शास्त्र' का एकमात्र सर्वोपरि केन्द्र था।

**आयुर्वेद विज्ञान का केन्द्र**

500 ई. पू. में जब संसार में चिकित्सा शास्त्र की परंपरा भी नहीं थी तब तक्षशिला 'आयुर्वेद विज्ञान' का सबसे बड़ा केन्द्र था। जातक कथाओं एवं विदेशी पर्यटकों के लेख से पता चलता है कि यहां के स्नातक मस्तिष्क के भीतर तथा अंतड़ियों तक का ऑपरेशन बड़ी सुगमता से कर लेते थे। अनेक असाध्य रोगों के उपचार सरल एवं सुलभ जड़ी बूटियों से करते थे। इसके अतिरिक्त अनेक दुर्लभ जड़ी - बूटियों का भी उन्हें ज्ञान था। शिष्य आचार्य के आश्रम में रहकर विद्याध्ययन करते थे। एक आचार्य के पास अनेक विद्यार्थी रहते थे। इनकी संख्या प्राय: सौ से अधिक होती थी और अनेक बार 500 तक पहुंच जाती थी। अध्ययन में क्रियात्मक कार्य को बहुत महत्त्व दिया जाता था। छात्रों को देशाटन भी कराया जाता था।

**शुल्क और परीक्षा**

शिक्षा पूर्ण होने पर परीक्षा ली जाती थी। तक्षशिला विश्वविद्यालय से स्नातक होना उस समय अत्यंत गौरवपूर्ण माना जाता था। यहां धनी तथा निर्धन दोनों तरह के छात्रों के अध्ययन की व्यवस्था थी। धनी छात्रा आचार्य को भोजन, निवास और अध्ययन का शुल्क देते थे तथा निर्धन छात्र अध्ययन करते हुए आश्रम के कार्य करते थे। शिक्षा पूरी होने पर वे शुल्क देने की प्रतिज्ञा करते थे। प्राचीन साहित्य से विदित होता है कि तक्षशिला विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले उच्च वर्ण के ही छात्र होते थे। सुप्रसिद्ध विद्वान, चिंतक, कूटनीतिज्ञ, अर्थशास्त्री चाणक्य ने भी अपनी शिक्षा यहीं पूर्ण की थी। उसके बाद यहीं शिक्षण कार्य करने लगे। यहीं उन्होंने अपने अनेक ग्रंथों की रचना की। इस विश्वविद्यालय की स्थिति ऐसे स्थान पर थी, जहां पूर्व और पश्चिम से आने वाले मार्ग मिलते थे। चतुर्थ शताब्दी ई. पू. से ही इस मार्ग से भारतवर्ष पर विदेशी आक्रमण होने लगे। विदेशी आक्रांताओं ने इस विश्वविद्यालय को काफ़ी क्षति पहुंचाई। अंततः छठवीं शताब्दी में यह आक्रमणकारियों द्वारा पूरी तरह नष्ट कर दिया।

उस काल में तक्षशिला एक विख्यात विश्वविद्यालय था, जो सिंधु नदी के किनारे बसे नगर के रूप में था। विश्वविद्यालय में प्रख्यात विद्वान् तथा विशेषज्ञ शिक्षकों के रूप में छात्रों को शिक्षा देते थे। तक्षशिला में शिक्षा ग्रहण करने के लिए दूर-दूर से राजकुमार, शाही परिवारों के पुत्र, ब्राह्मणों, विद्वानों, धनी लोगों तथा उच्च कुलों के बेटे आते थे। तक्षशिला आजकल पाकिस्तान में है। पुरातत्त्व खुदाई में विश्वविद्यालय का पूरा चित्र उभरकर सामने आया है। तक्षशिला में दस हज़ार छात्रों के आवास व पढ़ाई की सुविधाएँ थीं। शिक्षकों की संख्या का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। विश्वविद्यालय में आवास कक्ष, पढ़ाई के लिए कक्ष, सभागृह और पुस्तकालय थे। तक्षशिला के अवशेषों को देखने के लिए आज प्रतिवर्ष हज़ारों पर्यटक, इतिहासकार तथा पुरातत्त्ववेत्ता तक्षशिला जाते हैं।

**3.ओदन्तपुरी विश्वविद्यालय / उदंतपुरी विश्वविद्यालय**

ओदन्तपुरी विश्वविद्यालय भी नालंदा और विक्रमशिला विश्वविद्यालय की तरह विख्यात था, परंतु उदंतपुरी विश्वविद्यालय का उत्खनन कार्य नहीं होने के कारण यह आज भी धरती के गर्भ में दबा है, जिसके कारण बहुत ही कम लोग इस विश्वविद्यालय के इतिहास से परिचित हैं।

अरब के लेखकों ने इसकी चर्चा 'अदबंद' के नाम से की है, वहीं 'लामा तारानाथ' ने इस 'उदंतपुरी महाविहार' को 'ओडयंतपुरी महाविद्यालय' कहा है। ऐसा कहा जाता है कि नालंदा विश्वविद्यालय जब अपने पतन की ओर अग्रसर हो रहा था, उसी समय इस विश्वविद्यालय की स्थापना की गई थी। इसकी स्थापना प्रथम पाल नरेश गोपाल ने सातवीं शताब्दी में की थी।

**खिजली का आक्रमण**

तिब्बती पांडुलिपियों से ऐसा ज्ञात होता है कि इस महाविहार के संचालन का भार 'भिक्षुसंघ' के हाथ में था, किसी राजा के हाथ नहीं। संभवतः उदंतपुरी महाविहार की स्थापना में नालंदा महाविहार और विक्रमशिला महाविहार के बौद्ध संघों का मतैक्य नहीं था। संभवतया इस उदंतपुरी की ख्याति नालंदा और विक्रमशिला की अपेक्षा कुछ अधिक बढ़ गई थी। तभी तो मुहम्मद बिन बख़्तियार ख़िलजी का ध्यान इस महाविहार की ओर हुआ और उसने सर्वप्रथम इसी को अपने आक्रमण का पहला निशाना बनाया।

ख़िलजी 1197 ई. में सर्वप्रथम इसी की ओर आकृष्ट हुआ और अपने आक्रमण का पहला निशाना बनाया। उसने इस विश्वविद्यालय को चारों ओर से घेर लिया, जिससे भिक्षुगण काफ़ी क्षुब्ध हुए और कोई उपाय न देखकर वे स्वयं ही संघर्ष के लिए आगे आ गए, जिसमें अधिकांश तो मौत के घाट उतार दिए गए, तो कुछ भिक्षु बंगाल तथा उड़ीसा की ओर भाग गए और अंत में इस विहार में आग लगवा दी। इस तरह विद्या का यह मंदिर सदा-सदा के लिए समाप्त हो गया।

**बिहार शरीफ**

उल्लेखनीय है कि उदंतपुर को ही इन दिनों 'बिहारशरीफ' के नाम से जाना जाता है। बिहारशरीफ के पास नालंदा विश्वविद्यालय होने के बावजूद उसी काल में उसी के नज़दीक एक अन्य विश्वविद्यालय की स्थापना होना आश्चर्य की बात है। उदंतपुरी के प्रधान आचार्य जेतारि और अतिश के शिष्य थे। एक समय विद्या और आचार्यों की प्रसिद्धि के कारण इसका महत्व नालंदा से अधिक बढ़ गया था। उदंतपुरी महाविहार के उन्नत तथा विकासशील बनाने में यहाँ के विद्यार्थियों तथा आचार्यों का विशेष योगदान रहा है। इनमें अतिश दीपंकर, ज्ञानश्रीमित्र, शांति-पा, योगा-पा, शांति रक्षित आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इस विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति 'प्रभाकर' थे। 'मित्र योगी' कुछ दिनों तक प्रधान आचार्य पद पर थे।

तिब्बती पांडुलिपियों के अनुसार वहाँ के प्रसिद्ध 'राजा खरी स्त्रोन डसुत्सेन' शिक्षा प्राप्त करने आए थे। शांति रक्षित इस महाविहार के प्रथम शिष्य रहे हैं, जिनके द्वारा यहाँ के सांस्कृतिक वैभव को देश-विदेशों में ख्याति प्राप्त करने का श्रेय रहा। इस विश्वविद्यालय में देश-विदेश के लगभग एक हज़ार विद्यार्थी अध्ययन किया करते थे।

**बौद्ध धर्म का मुख्य केन्द्र**

नालंदा व विक्रमशिला विश्वविद्यालय की तरह देश के राजाओं तथा धनाढ्य लोगों द्वारा सहायता मिलती थी। फिर भी उदंतपुरी विश्वविद्यालय बौद्ध धर्म के माननेवाले तथा भिक्षुओं का मुख्य केंद्र था। तिब्बत में इनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की जाती है। आज भी उनके कमंडल, खोपड़ी और अस्थियाँ वहाँ के संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

शांति रक्षित लगभग 743 ई. में जब तिब्बत गए तो वहाँ पर 'उदंतपुरी महाविहार' के

समरूप ही एक 'बौद्ध विहार' का निर्माण कराया, जिसे 'साम्ये विहार' के नाम से जाना जाता है। यहाँ एक बहुत बड़ा समृद्धशाली पुस्तकालय है, जिसके संबंध में कहा जाता है कि जितना विशाल संग्रह यहाँ उपलब्ध था, उतना संग्रह विक्रमशिला विश्वविद्यालय में भी नहीं था।

बुकानन और कनिंघम ने आधुनिक बिहारशरीफ शहर जो कि नालंदा जाने के मार्ग में पड़ता है, वहाँ एक विशाल टीले का उल्लेख किया है। यहाँ के एक बौद्ध देवी की कांस्य की प्रतिमा प्राप्त हुई है। इस पर एक अभिलेख अंकित है जिसमें 'एणकठाकुट' का नाम उल्लेखित है। यह उदंतपुरी का निवासी था। शायद इसी अभिलेख के आधार पर इस स्थान की पहचान उदंतपुरी विश्वविद्यालय से की गई है।

**4. नालन्दा विश्वविद्यालय**

बिहार के नालन्दा ज़िले में एक नालन्दा विश्वविद्यालय था, जहां देश - विदेश के छात्र शिक्षा के लिए आते थे। नालन्दा विश्वविद्यालय प्राचीन भारत में उच्च शिक्षा का सर्वाधिक महत्वपूर्ण और विख्यात केन्द्र था। आजकल इसके अवशेष दिखलाई देते हैं। पटना से 90 किलोमीटर दूर और बिहार शरीफ़ से क़रीब 12 किलोमीटर दक्षिण में, विश्व प्रसिद्ध प्राचीन बौद्ध विश्वविद्यालय, नालंदा के खण्डहर स्थित हैं। यहाँ 10,000 छात्रों को पढ़ाने के लिए 2000 शिक्षक थे। प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वेनसांग ने 7वीं शताब्दी में यहाँ जीवन का महत्त्वपूर्ण एक वर्ष एक विद्यार्थी और एक शिक्षक के रूप में व्यतीत किया था। प्रसिद्ध 'बौद्ध सारिपुत्र' का जन्म यहीं पर हुआ था।

**इतिहास**

इस विश्वविद्यालय के निर्माण के विषय में निश्चित जानकारी का अभाव है फिर भी गुप्त वंशी शासक कुमारगुप्त (414-455 ई.) ने इस बौद्ध संघ को पहला दान दिया था। ह्वेनसांग के अनुसार 470 ई. में गुप्त सम्राट नरसिंह गुप्त बालादित्य ने नालन्दा में एक सुन्दर मन्दिर निर्मित करवाकर इसमें 80 फुट ऊंची तांबे की बुद्ध प्रतिमा को स्थापित करवाया।

**विश्वविद्यालय की स्थापना**

गुप्तकालीन सम्राट कुमारगुप्त प्रथम ने 415-454 ई.पू. नालन्दा विश्वविद्यालय की स्थापना की थी। नालंदा संस्कृत शब्द 'नालम् + दा' से बना है। संस्कृत में 'नालम' का अर्थ 'कमल' होता है। कमल ज्ञान का प्रतीक है। नालम् + दा यानी कमल देने वाली, ज्ञान देने वाली। कालक्रम से यहाँ महाविहार की स्थापना के बाद इसका नाम 'नालंदा महाविहार' रखा गया।

महाराज शकादित्य, सम्भवत: गुप्तवंशीय सम्राट कुमार गुप्त, 415-455 ई., ने इस जगह को विश्वविद्यालय के रूप में विकसित किया। उसके बाद उनके उत्तराधिकारी अन्य राजाओं ने यहाँ अनेक विहारों और विश्वविद्यालय के भवनों का निर्माण करवाया। इनमें से गुप्त सम्राट बालादित्य ने 470 ई. में यहाँ एक सुंदर मंदिर बनवाकर भगवान बुद्ध की 80 फीट की प्रतिमा स्थापित की थी। नालन्दा विश्वविद्यालय में अध्ययन करने के लिए जावा, चीन, तिब्बत, श्रीलंका व कोरिया आदि के छात्र आते थे।

जब ह्वेनसांग भारत आया था उस समय नालन्दा विश्वविद्यालय में 8500 छात्र एवं 1510 अध्यापक थे। इसके प्रख्यात अध्यापकों शीलभद्र ,धर्मपाल, चन्द्रपाल, गुणमति, स्थिरमति, प्रभामित्र, जिनमित्र, दिकनाग, ज्ञानचन्द्र, नागार्जुन, वसुबन्धु, असंग, धर्मकीर्ति आदि थे।

विदेशी यात्रियों के वर्णन के अनुसार नालन्दा विश्वविद्यालय में छात्रों के रहने की उत्तम व्यवस्था थी। उल्लेख मिलता है कि यहाँ आठ शालाएं और 300 कमरे थे। कई खंडों में विद्यालय तथा छात्रावास थे। प्रत्येक खंड में छात्रों के स्नान लिए सुंदर तरणताल थे जिनमें नीचे से ऊपर जल लाने का प्रबंध था। शयनस्थान पत्थरों के बने थे। जब नालन्दा विश्वविद्यालय की खुदाई की गई तब उसकी विशालता और भव्यता का ज्ञान हुआ। यहाँ के भवन विशाल, भव्य और सुंदर थे। कलात्मकता तो इनमें भरी पड़ी थी। यहाँ तांबे एवं पीतल की बुद्ध की मूर्तियों के प्रमाण मिलते हैं।

इस विश्वविद्यालय में पालि भाषा में शिक्षण कार्य होता था। 12वीं शती में बख़्तियार ख़िलजी के आक्रमण से यह विश्वविद्यालय नष्ट हो गया था। पहले यहाँ केवल एक बौद्ध विहार बना था जो धीरे-धीरे एक महान् विद्यालय के रूप में परिवर्तित हो गया। इस विश्वविद्यालय को गुप्त तथा मौखरी नरेशों तथा 'कान्यकुब्जाधिप' हर्ष से निरंतर अर्थ सहायता और संरक्षण प्राप्त होता रहा। युवानच्वांग के पश्चात् भी अगले 30 वर्षों में नालंदा में प्रायः ग्यारह चीनी और कोरियायी यात्री आए थे।

नालन्दा विश्वविद्यालय के शिक्षक अपने ज्ञान एवं विद्या के लिए विश्व में प्रसिद्ध थे। इनका चरित्र सर्वथा उज्ज्वल और दोषरहित था। छात्रों के लिए कठोर नियम था। जिनका पालन करना आवश्यक था। चीनी यात्री हवेनसांग ने नालंदा विश्वविद्यालय में बौद्ध दर्शन, धर्म और साहित्य का अध्ययन किया था। उसने दस वर्षों तक यहाँ अध्ययन किया। उसके अनुसार इस विश्वविद्यालय में प्रवेश पाना सरल नहीं था। यहाँ केवल उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्र ही प्रवेश पा सकते थे। प्रवेश के लिए पहले छात्र को परीक्षा देनी होती थी। इसमें उत्तीर्ण होने पर ही प्रवेश संभव था। विश्वविद्यालय के छः द्वार थे। प्रत्येक द्वार पर एक द्वार पण्डित होता था। प्रवेश से पहले वो छात्रों की वहीं परीक्षा लेता था। इस परीक्षा में 20 से 30 प्रतिशत छात्र ही उत्तीर्ण हो पाते थे। विश्वविद्यालय में प्रवेश के बाद भी छात्रों को कठोर परिश्रम करना पड़ता था तथा अनेक परीक्षाओं में उत्तीर्ण होना अनिवार्य था। यहाँ से स्नातक करने वाले छात्र का हर जगह सम्मान होता था।

चीन में इत्सिंग और हुइली और कोरिया से हाइनीह, यहाँ आने वाले विदेशी यात्रियों में मुख्य है। 630 ई. में जब युवानच्वांग यहाँ आए थे तब यह विश्वविद्यालय अपने चरमोत्कर्ष पर था। इस समय यहाँ दस सहस्त्र विद्यार्थी और एक सहस्त्र आचार्य थे। विद्यार्थियों का प्रवेश नालंदा विश्वविद्यालय में काफ़ी कठिनाई से होता था क्योंकि केवल उच्चकोटि के विद्यार्थियों को ही प्रविष्ट किया जाता था। शिक्षा की व्यवस्था महास्थविर के नियंत्रण में थी। शीलभद्र उस समय यहाँ के प्रधानाचार्य थे। ये प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान् थे। यहाँ के अन्य ख्यातिप्राप्त आचार्यों में नागार्जुन, पदमसंभव, जिन्होंने तिब्बत में बौद्ध धर्म का प्रचार किया, शांतिरक्षित और दीपंकर, ये सभी बौद्ध धर्म के इतिहास में प्रसिद्ध हैं।

नालंदा 7वीं शती में तथा उसके पश्चात् कई सौ वर्षों तक एशिया का सर्वश्रेष्ठ विश्वविद्यालय था। यहाँ अध्ययन के लिए चीन के अतिरिक्त चंपा, कंबोज, जावा, सुमात्रा, ब्रह्मदेश, तिब्बत, लंका और ईरान आदि देशों के विद्यार्थी आते थे और विद्यालय में प्रवेश पाकर

अपने को धन्य मानते थे। नालन्दा विश्वविद्यालय में शिक्षा, आवास, भोजन आदि का कोई शुल्क छात्रों से नहीं लिया जाता था। सभी सुविधाएं निःशुल्क थीं। राजाओं और धनी सेठों द्वारा दिये गये दान से इस विश्वविद्यालय का व्यय चलता था। इस विश्वविद्यालय को 200 ग्रामों की आय प्राप्त होती थी।

नालंदा के विद्यार्थियों के द्वारा ही एशिया में भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति का विस्तृत प्रचार व प्रसार हुआ था। यहाँ के विद्यार्थियों और विद्वानों की मांग एशिया के सभी देशों में थी और उनका सर्वत्रादर होता था। तिब्बत के राजा के निमंत्रण पर भदंत शांतिरक्षित और पद्मसंभव तिब्बत गए थे और वहाँ उन्होंने संस्कृत, बौद्ध साहित्य और भारतीय संस्कृति का प्रचार करने में अप्रतिम योग्यता दिखाई थी।

नालंदा में बौद्ध धर्म के अतिरिक्त हेतुविद्या, शब्दविद्या, चिकित्सा शास्त्र, अथर्ववेद तथा सांख्य से संबंधित विषय भी पढ़ाए जाते थे। युवानच्वांग ने लिखा था कि नालंदा के एक सहस्त्र विद्वान् आचार्यों में से सौ ऐसे थे जो सूत्र और शास्त्र जानते थे, पांच सौ, 3 विषयों में पारंगत थे और बीस, 50 विषयों में। केवल शीलभद्र ही ऐसे थे जिनकी सभी विषयों में समान गति थी।

**पुस्तकालय**

नालंदा विश्वविद्यालाय के तीन महान् पुस्तकालय थे - रत्नोदधि, रत्नसागर, रत्नरंजक

इनके भवनों की ऊँचाई का वर्णन करते हुए युवानच्वांग ने लिखा है कि 'इनकी सतमंजिली अटारियों के शिखर बादलों से भी अधिक ऊँचे थे और इन पर प्रातःकाल की हिम जम जाया करती थी। इनके झरोखों में से सूर्य का सतरंगा प्रकाश अन्दर आकर वातावरण को सुंदर एवं आकर्षक बनाता था। इन पुस्तकालयों में सहस्त्रों हस्तलिखित ग्रंथ थे।' इनमें से अनेकों की प्रतिलिपियां युवानच्वांग ने की थी। जैन ग्रंथ 'सूत्रकृतांग' में नालंदा के 'हस्तियान' नामक सुंदर उद्यान का वर्णन है। 1303 ई. में आक्रमणकारियों के बिहार और बंगाल पर आक्रमण के समय, नालंदा को भी उसके प्रकोप का शिकार बनना पड़ा। यहाँ के सभी भिक्षुओं को आक्रांताओं ने मौत के घाट उतार दिया। आक्रमणकारियों ने नालंदा के जगत् प्रसिद्ध पुस्तकालय को जलाकर भस्मसात कर दिया और यहाँ की सतमंजिली भव्य इमारतों और सुंदर भवनों को नष्ट-भ्रष्ट करके खंडहर बना दिया। इस प्रकार भारतीय विद्या, संस्कृति और सभ्यता के घर नालंदा को जिसकी सुरक्षा के बारे में संसार की कठोर वास्तविकताओं से दूर रहने वाले यहाँ के भिक्षु विद्वानों ने शायद कभी नहीं सोचा था, एक ही आक्रमण के झटके ने धूल में मिला दिया।

**उत्खनन**

अब तक हुए उत्खनन में मिले अवशेषों से ऐसा प्रतीत होता है कि यहां पर व्याख्यान हेतु 7 बड़े कक्ष एवं 300 छोटे कक्ष बनाये गये थे। विद्यार्थियों के रहने के लिए छात्रावासों की सुविधा थी। शैलेन्द्र शासक बालपुत्र देव ने तत्कालीन मगध नरेश देवपाल की अनुमति से नालन्दा में जावा से आये भिक्षुओं के निवास के लिए एक विहार का निर्माण करवाया था। यहां हस्तलिखित ग्रंथों का एक नौ मंजिला 'धर्मगज' नामक पुस्तकालय था जो तीन बड़े भवन रत्नसागर रत्नोदधि एवं रत्नरंजक नाम से विभाजित था।

# अनपढ़ ही रहता - माता-पिता की सेवा करता

✍ **मोनू कुमार**
कनिष्ठ प्रोग्रेसमेन

शंभूनाथ एक विद्यालय में शिक्षक थे। वे तेज बुद्धि के व्यक्ति थे इसलिए कभी-कभी विद्यार्थी उनके यहॉ पढ़ने के लिए भी आते थे। उम्र होने के कारण अब वे सेवानिवृत्त हो चुके थे जिससे अधिकतर समय घर पर ही व्यतीत होता था। खाली वक्त में अखबार पढ़ना और जब कभी उससे भी मन की हताशा दूर न हो तो अपने बड़े बेटे लखीराम को बुरा भला कहते थे। शंभूनाथ की दिन चर्या में शामिल था, बड़ा बेटा लखीराम भी उनकी बातों को दिल से नहीं लेता था। बस उनकी आदत है यही सोच कर बर्दास्त कर लेता था।

शंभूनाथ का घर पूरी तरह से सुख सम्पन्न था क्योंकि दो छोटे बेटे रामाकांत और भरत सरकारी नौकरी पर थे। एक डॉक्टर तो एक पुलिस में था। महीने पर अच्छी खासी रकम घर पर आ जाती थी। इतना रुपया पाकर शंभूनाथ का दिल खुशी से झूम उठता था। परन्तु जैसे ही उसकी नज़र लखीराम पर पड़ती वैसे ही उसकी हसीं गम मे बदल जाती और वह अपने अनपढ बेटे को कोसने लगता था। क्योंकि वह चाहता था कि लखीराम भी अपने भाइयों की तरह पढ़ लिखकर सरकारी नौकरी करे परन्तु शंभूनाथ के अथक प्रयास से भी लखीराम का मन पढ़ाई में न लगा।

अब तो आलम यह था कि हर रोज लखीराम को गाली देना और घर का सारा काम लखीराम से ही करवाता यह सब शंभूनाथ की आदत में शुमार हो चुका था। जब कभी भी कोई व्यक्ति अपने बेटे की नौकरी लगने की खबर शंभूनाथ को सुनाता तो शंभूनाथ का गुस्सा लखीराम पर सांतवें आसमान में चढ़ जाता।

लखीराम की अब यही दिनचर्या बन चुकी थी कि खेत से चारा काट कर लाना और मशीन से काटकर जानवरों को डालना, घर का खाना भी बनाना और शाम को शंभूनाथ के पैर दबाना, इतना करने के बाबजूद भी उसे इनाम में गालियां ही मिलती थी।

परन्तु फिर भी उसके मुंह से कभी भी शंभूनाथ के खिलाफ एक शब्द भी नहीं निकलता। जब कभी भी वो ज्यादा उदास होता तो अपनी माँ की फ़ोटो को गले से लगाकर बहुत रोता। उनकी मॉ दो साल पहले ही गुजर चुकी थी।

एक दिन शंभूनाथ कुर्सी पर बैठे अखबार पढ़ रहे थे कि तभी शंभू एक मिठाई का डब्बा लेकर वहाँ आया और शंभूनाथ को वह मिठाई का डब्बा दिया। यह देखकर शंभूनाथ का चेहरा तिलमिला उठा क्योंकि शंभूनाथ बहुत ही ईर्ष्यालु व्यक्ति था। किसी और कि खुशी उससे बर्दास्त नहीं होती थी। इसलिए कोई भी व्यक्ति उसे अपनी खुशियों में शामिल नहीं करता था।

शंभूनाथ ने भौवें चढ़ाकर कहा, " क्या बात है शम्भू आज तू बहुत मिठाई बाँट रहा है। आख़िर इस खुशी का कारण क्या है? क्या कोई लॉटरी लग गयी है?"

शम्भू ने प्रतिउत्तर में कहा "बात यह है कि भैया, आज मेरे बेटे की पुलिस में नौकरी लग गयी है।"

शंभूनाथ ने शम्भू को अचरज भरी निगाहों से देखते हुए पूँछा "क्या कह रहे हो तुम्हारे बेटे की नौकरी लग गयी है, वही बेटा जो 12वीं में लुढ़कते-लुढ़कते बचा, वो आज पुलिस वाला बन गया है। अरे ! हमें तो विश्वास ही नही होता है कि उसकी भी नौकरी लग सकती है।"

शम्भू ने नर्म भाव से कहा, "हाँ, भैया उसकी ही नौकरी लग गयी है, बस सब ऊपर बाले की कृपा है, आज मेरा बेटा पुलिस वाला बन गया है इसी खुशी में आज हम लड्डू बाँट रहे है।"

तब तक लखीराम भी वहाँ आ चुका था। शम्भू ने लखीराम को देखकर, डब्बे में से एक लड्डू निकालकर लखीराम को देते हुए कहा, "बेटा, आज बड़ी खुशी की बात है, तुम्हारा दोस्त राघव आज पुलिस वाला बन गया है।" यह सुनकर लखीराम खुशी से झूम उठा, और खुश होकर शम्भू से पूँछा, " क्या काका, सच में मेरा दोस्त पुलिस वाला बन गया है?"

तभी शंभूनाथ ने लखीराम को घूरकर देखा, तो लखीराम सकपकाकर एक कोने में खड़ा हो गया। शंभूनाथ ने आंखें ततेर कर लखीराम की तरफ देखते हुए कहा, "देख ले एक वो है जो पुलिस में लग गया और एक तू जो भैंसे चराता है। अरे कितनी बार तुझको समझाया की पढ़ ले। तू ने मेरी हरगिज न मानी, अरे तू तो बस इस धरती के लिए बोझ है। इससे ज्यादा और कुछ नहीं, समझा!

शम्भू को यह देखकर लखीराम पर तरस आ गया उसने नरम स्वर में शंभूनाथ् से कहा, " अरे भैया क्यों बुरा भला कह रहे हो लखीराम को अरे, उसका मन पढ़ाई में नहीं लगा तो नहीं लगा, इस तरह आप इसे बुरा भला क्यों कहते रहते हो, आप अगर मेरी मानो तो आप लखीराम की शादी करा दो घर में बहु आएगी तो आपका भी ख्याल रखेगी और लखीराम का भी ख्याल रखेगी।

शंभूनाथ ने लखीराम की तरफ देखा और फिर शम्भू से कहा "अरे इस अभागे को कौन व्याहेगा अपनी बेटी, इससे शादी करने से पहले वो अपनी बेटी को जहर न दे दे।"

शम्भू ने प्रतिउत्तर में कहा, "अरे क्यों नहीं हमारे साले की बिटिया है रज्जो, आप अगर राजी हो जाओ तो रिश्ते की बात चलाये।"

शंभूनाथ ने शम्भू की बात को नकारते हुए कहा, "नहीं नहीं,,, वो तो बिल्कुल अनपढ है, और मैं इसी एक अनपढ को बड़ी मुश्किल से बर्दास्त कर पा रहा हूँ उसे कैसे कर पाऊँगा।"

शम्भू ने जबाब दिया, "अरे, आप भी कमाल करते हो, अब लखीराम जितना पढ़ा लिखा है उतनी ही पढ़ी लिखी बिटिया मिलेगी, मेरी मानो तो फिर एक बार सोच लो। बिटिया घरेलू काम-काज में दक्ष है घर का सारा काम अकेले ही कर लिया करेगी। "

शंभूनाथ ने कहा, "अरे, ऐसे तो इसका व्याह कब का हो चुका होता, अरे हम अपने घर में अनपढ लोगों को तो बिल्कुल भी बर्दाश्त नहीं कर पाएंगे, और तुम इसकी चिंता छोड़ो ये तो है ही धरती का बोझ, पड़ा-पड़ा खाता रहता, कभी-कभी तो हमें लगता है, काश ! ये हुआ ही न होता, तो मेंरे दिल को बड़ी तसल्ली मिल जाती। "शम्भू ने शंभूनाथ को समझाते हुए कहा, " ऐसे मत बोलो लड़का सयाना हो चुका है। कहीं आपकी बातों में आकर कुछ उल्टा सीधा कर लिया तो !

शंभूनाथ ने जबाब दिया, "अरे, कर ले जाके, तो क्या फर्क पड़ेगा हम पर अरे, हमारे तो दो दो पट्ठे कमा रहे है, अरे कल मरे तो आज मर जाये, कम से कम धरती का बोझ तो कम होगा।"

शंभूनाथ की एक एक बात लखीराम को अंदर तक तोड़ रही थी। आज उसकी हिम्मत जबाब दे चुकी थी। आज उसने अपने जीवन को खत्म करने का अंतिम निर्णय ले लिया था।,

आज उसने एक बड़ी सी रस्सी ले ली और चारा लेने के बहाने से घर से निकल गया, और खेत पर खड़े नीम के पेड़ पर उसने फांसी लगा ली।"

जब रात अधिक हो गयी और लखीराम घर वापस नहीं लौटा तो शंभूनाथ ने आस पड़ोस में पता किया, पता करने पर पता चला कि वह खेत से चारा लेकर बापस ही नहीं आया था, अब शंभूनाथ खेत पर गए, वहाँ वह नीम के पेड़ की तरफ देखकर सन्न रह गए क्योंकि नीम के पेड़ पर लखीराम की लाश झूल रही थी। गांव के लोगो की भीड़ एकत्रित हो गयी और वहाँ उपस्थित लोगों ने लखीराम की लाश को नीम के पेड़ से उतारा और उसका क्रियाकर्म कर दिया।

परन्तु इतना कुछ होने के बाबजूद शंभूनाथ पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह पहले की तरह ही जिंदगी जीने लगा।

वक्त धीरे धीरे गुजरता गया। अब उसके दोनों बेटों की शादी हो चुकी थी। जो बेटा डॉक्टर था उसकी पत्नी भी डॉक्टर और जो बेटा पुलिस में था उसकी पत्नी पुलिस वाली, समय के साथ साथ शंभूनाथ की उम्र काफी ढल चुकी थी उंसके हाँथ पैर उसका साथ नहीं देते कोई भी काम करने पर उसकी हाँफी फूल जाती।

बड़े बेटे ने शहर में एक अस्पताल खोल लिया और दोनो मिया बीबी शहर में रहने लगे, कुछ दिनों बाद छोटे बेटे की भी पोस्टिंग दूसरे शहर में हो गयी, तो उसने अपनी पत्नी की भी पोस्टिंग उसी शहर में करवा ली, अब दोनों ही मिया बीवी जाने की तैयारी में जुट गए।

तभी शंभूनाथ अपने छोटे बेटे भरत से कहा, " बेटा बड़े बेटे और बहू तो हमें छोड़कर चले गए अब तुम लोग भी जा रहे हो अब हम अकेले यहाँ कैसे रहेंगे, बेटा ऐसा करो हमें भी अपने साथ लेते चलो।"

भरत ने प्रतिउत्तर में कहा " बापू आप जानते तो है शहर का वास्ता है अभी हमलोग खुद किराए पर रह रहे है। और आप को कैसे रखेंगे, वैसे भी बापू हमारे पास ये इतना बड़ा घर इसे किसके हवाले छोड़कर जाएंगे।"

शंभूनाथ ने निवेदन किया, " बेटा इतने बड़े घर में मैं अकेला रह कर क्या करूँगा, अरे मुझसे तो कुछ किया भी नहीं जाता है, मेरी देखभाल कौन करेगा "

भरत ने शंभूनाथ को समझाते हुए कहा, "बापू आप चिंता मत करो मैं इस घर को बेच कर शहर में एक नया घर ले रहे है, बस यहाँ ये घर बेचेंगे और वहाँ नया घर खरीद लेंगे, हाँ, बापू, ये ही दो चार दिन में सेठ इस घर को खरीदने आएगा, आप घर के कागजात पर साइन कर देना और सेठ से 3 लाख रुपये भी ले लेना और शहर चले आना और जब शहर पहुँच जाओ तो ये रहा मेरा फोन नंबर हमें कॉल कर देना मैं तुम्हें लेने या जाऊँगा। आप चिंता मत करो बस दो चार दिन की ही तो बात है"। फिर भरत शंभूनाथ को अपने गले से लगाता है और उनके पैर छू कर वहां से चल जाता है। आज इतने बड़े घर में शंभूनाथ अकेला था।

जब उसे भूख लगी तो उसने रोटी बनाने के लिए आटा गूंदा, बूढ़े हांथों में इतनी जान कहाँ थी

कि जो आटा भी सही से गूंदा जाए, आज उसे अपने बड़े बेटे लखीराम की याद रह रह कर आ रही थी। यादों का सैलाब जब ज्यादा हो गया तो उसे अपनी आँखों के सामने लखीराम का अक्स नज़र आने लगा। वो लखीराम का आटा गूंदना और रोटी बनाना एक एक करके सभी दृश्य उसके आँखों में तैरने लगे। उसकी बूढ़ी आँखों में आज आँसू छलक उठे और मन से सिर्फ एक ही आवाज निकल रही थी कि काश ! आज मेरा अनपढ लखीराम ही होता, तो उसकी शादी होती और एक अनपढ बहु इस घर में आती, कम से कम वो घर में तो रहती और खाना बनाती, लखीराम मेरा घर का सारा काम करता और मैं पहले की तरह ही कुर्सी डालकर बैठे अखबार पड़ता।"

परन्तु अब सपनो को देखने से होने बाला क्या है। जो कुछ उसने किया आज वो उसके सामने था। दो चार दिन यूँ ही गुजर गए और वो दिन भी आ गया। जिस दिन सेठ ने रुपये देने के लिए कहा था।

सेठ ने घर के कागज़ पर साइन करा लिए और शंभूनाथ को तीन लाख रुपये दे दिए। रुपये मिलते ही शंभूनाथ शहर जाने की तैयारी कर ली और शंभूनाथ ने भरत को फ़ोन करके सब बता दिया कि वो बस स्टैंड पर उसका इंतजार करेंगे।

कहे मुताबिक शंभूनाथ वहां पहुँच गए और बैठकर भरत का इंतजार करने लगे तभी वहां भरत आ गया और शंभूनाथ के पास आकर कहा, " बापू, आप पैसे लाये हो न, मुझे दे दो, वो जो मैंने नया घर खरीदा है उसका मालिक अभी रुपये माँग रहा है, अगर मैंने उसे अभी रुपये नहीं दिए तो वो अपना घर किसी और को बैंच देगा।"

शंभूनाथ ने रुपयों का बैग झटपट से भरत को दे दिया। भरत ने रुपये लेकर शंभूनाथ से कहा, "बापू, आप यहीं बैठो मैं सेठ को अभी रुपये दे कर आता हूँ और भरत अपने बापू को वही बैठा कर रुपये लेकर वहाँ से चला गया, और शंभूनाथ वहीँ बैठकर उसका इंतजार करने लगे, समय धीरे धीरे काफी बीत चुका था परन्तु भरत अभी तक वापस नहीं आया था शाम होने को थी, शंभूनाथ बहुत ही चिंतित था कि भरत अभी तक नहीं आया, उससे रहा नहीं गया तो उसने एक राहगीर से वही फ़ोन नंबर लगवाया जो उसे भरत ने दिया था, परन्तु फ़ोन भी स्विचऑफ आ रहा था, अब शंभूनाथ की चिंता और भी अधिक बढ़ चुकी थी। वो हतास बैठा ही हुआ था कि तभी उसे एक मोटर साईकल आते हुए दिखाई दी, जिस पर भरत बैठा हुआ था, वह दूर से ही भरत को आवाज लगाने लगा, परन्तु भरत शंभूनाथ को पास से देखता हुआ निकल गया। आज भरत ने उसे बहुत बड़ा धोखा दे दिया था। जिसकी उम्मीद शंभूनाथ को बिल्कुल भी न थी। अब शंभूनाथ वही बैठकर रोने लगा।, अब अंधेरा काफी ढल चुका था, शंभूनाथ के पास 100 रुपये थे जो उसके घर वापस आने के किराए के लिए उपयुक्त थे।

शंभूनाथ बस में बैठ कर घर आ गया।, घर क्या गांव आ गया क्योंकि अब घर तो सेठ का हो चुका था, अब उसके पास घर नहीं था तो रात को अकेले गांव की चौपाल पर बैठकर काफी देर तक रोता रहा, फिर अपने आँसू को पौंछकर उठा और हाथ में एक रस्सी लेकर उसी नीम के पेड़ के पास गया, जहां लखीराम ने आत्महत्या की थी उसी पेड़ के नीचे बैठ के दहाड़े मार कर रोने लगा और रोते

हुए कहा " बेटा लखीराम, आज मेरे लिए खाना बनाने वाला कोई नहीं है, आज तेरा बाप इतना बूढ़ा हो गया कि अपने हाथों से अपने लिए खाना भी नही बना पाता है आज बहुत अरसे हो गए है तेरे हाथ का खाना खाएं, आज फिर से तेरा बाप तेरे हाथ का खाना खाना चाहता है, खिलायेगा न बेटा, आज तेरा बाप तेरे घर खाना खाने आ रहा है, तू अपने इस अभागे बाप को अपने घर मे स्वीकार करेगा न, कहीं अपने भाइयों की तरह मुझे निकाल मत देना।"

इतना कहते कहते वह फूट फूट कर रोने लगा और अंत मे उसी नीम के पेड़ पर रस्सी डालकर फाँसी लगा ली है। कुछ देर तक वह फड़फड़ाया और फिर एक दम शांत पड़ गया। उसकी गर्दन नीचे को लटक गयी और वह अंतिम धाम को चला गया।

---

**किसको नमन करूँ मैं भारत ?**

तुझको या तेरे नदीश, गिरि, वन को नमन करूँ, मैं ?
मेरे प्यारे देश! देह या मन को नमन करूँ मैं ?
किसको नमन करूँ मैं भारत ? किसको नमन करूँ मैं ?

भू के मानचित्र पर अंकित त्रिभुज, यही क्या तू है ?
नर के नभश्चरण की दृढ़ कल्पना नहीं क्या तू है ?
भेदों का ज्ञाता, निगूढ़ताओं का चिर ज्ञानी है
मेरे प्यारे देश ! नहीं तू पत्थर है, पानी है
जड़ताओं में छिपे किसी चेतन को नमन करूँ मैं ?

तू वह, नर ने जिसे बहुत ऊँचा चढ़कर पाया था;
तू वह, जो संदेश भूमि को अम्बर से आया था।
तू वह, जिसका ध्यान आज भी मन सुरभित करता है;
थकी हुई आत्मा में उड़ने की उमंग भरता है।
गन्ध -निकेतन इस अदृश्य उपवन को नमन करूँ मैं?
किसको नमन करूँ मैं भारत ! किसको नमन करूँ मैं?
वहाँ नहीं तू जहाँ जनों से ही मनुजों को भय है;
सब को सब से त्रास सदा सब पर सब का संशय है ।
जहाँ स्नेह के सहज स्रोत से हटे हुए जनगण हैं,
झंडों या नारों के नीचे बँटे हुए जनगण हैं ।
कैसे इस कुत्सित, विभक्त जीवन को नमन करूँ मैं ?
किसको नमन करूँ मैं भारत ! किसको नमन करूँ मैं?
तू तो है वह लोक जहाँ उन्मुक्त मनुज का मन है;
समरसता को लिये प्रवाहित शीत-स्निग्ध जीवन है।
जहाँ पहुँच मानते नहीं नर-नारी दिग्बन्धन को;
आत्म-रूप देखते प्रेम में भरकर निखिल भुवन को।
कहीं खोज इस रुचिर स्वप्न पावन को नमन करूँ मैं ?
किसको नमन करूँ मैं भारत ! किसको नमन करूँ मैं ?
भारत नहीं स्थान का वाचक, गुण विशेष नर का है
एक देश का नहीं, शील यह भूमंडल भर का है
जहाँ कहीं एकता अखंडित, जहाँ प्रेम का स्वर है
देश-देश में वहाँ खड़ा भारत जीवित भास्कर है
निखिल विश्व को जन्मभूमि-वंदन को नमन करूँ मैं !
खंडित है यह मही शैल से, सरिता से सागर से
पर, जब भी दो हाथ निकल मिलते आ द्वीपांतर से
तब खाई को पाट शून्य में महामोद मचता है
दो द्वीपों के बीच सेतु यह भारत ही रचता है
मंगलमय यह महासेतु-बंधन को नमन करूँ मैं !
दो हृदय के तार जहाँ भी जो जन जोड़ रहे हैं
मित्र-भाव की ओर विश्व की गति को मोड़ रहे हैं
घोल रहे हैं जो जीवन-सरिता में प्रेम-रसायन
खोर रहे हैं देश-देश के बीच मुँदे वातायन
आत्मबंधु कहकर ऐसे जन-जन को नमन करूँ मैं !
उठे जहाँ भी घोष शांति का, भारत, स्वर तेरा है
धर्म-दीप हो जिसके भी कर में वह नर तेरा है
तेरा है वह वीर, सत्य पर जो अड़ने आता है
किसी न्याय के लिए प्राण अर्पित करने जाता है
मानवता के इस ललाट-वंदन को नमन करूँ मैं !

_ **रामधारी सिंह दिनकर**

# बाबा बैद्यनाथ मंदिर

✍ **रजनीकांत मिश्र**
वरिष्ठ अनुभाग इंजीनियर

**बा**बा बैद्यनाथ मंदिर, देवघर (झारखंड राज्य) में स्थित है जहॉ शिव और शक्ति एक साथ विराजमान हैं, लंकापति रावण के नाम से भी बैद्यनाथ मंदिर जाने जाते हैं। देवघर स्थित बाबा बैद्यनाथ धाम भगवान शिव के 9वें ज्योतिर्लिंग के रूप में जाना जाता है.

मान्यताओं के मुताबिक बाबा बैद्यनाथ धाम में ही माता सती का हृदय कट कर गिरा था। देवघर भगवान शिव के 12 ज्योतिर्लिंगों में से एक है झारखंड के देवघर स्थित बाबा बैद्यनाथ धाम, द्वादश ज्योतिर्लिंगों में इसे 9वें ज्योतिर्लिंग के रूप में जाना जाता है। देवघर स्थित बैजनाथधाम भगवान भोलेनाथ का एक मात्र मंदिर है. जहां शिव और शक्ति दोनों एक साथ विराजमान हैं इसलिए इसे शक्ति पीठ के नाम से भी जाना जाता है। मान्यताओं के मुताबिक बाबा बैद्यनाथ धाम में ही माता सती का हृदय कट कर गिरा था इस लिए इसे हृदय पीठ के रूप में भी जाना जाता है।

देवघर स्थित विश्व प्रसिद्ध बैद्यनाथ मंदिर एकमात्र ऐसा मंदिर है जिसका जुड़ाव लंकापति दशानन रावण से है। रावण से जुड़ाव के कारण बैधनाथ धाम स्थित भगवान भोलेनाथ के शिवलिंग को रावणेश्वर बैद्यनाथ ज्योतिर्लिंग के नाम से भी जाना जाता है।

**<u>रावण ने किया था भगवान शिव से लंका चलने का आग्रह</u>**

पौराणिक कथाओं के अनुसार लंकापति रावण भगवान शिव को प्रसन्न करने के लिए एक के बाद एक अपनी सर की बलि देकर शिवलिंग पर चढ़ा रहे थे, एक के बाद एक कर दशानन रावण ने भगवान के शिवलिंग पर 9 सिर काटकर चढ़ा दिए, जैसे ही दशानन दसवें सिर की बलि देने वाला था वैसे ही भगवान भोलेनाथ प्रकट हो गए। भगवान ने प्रसन्न होकर दशानन से वरदान मांगने को कहा। इसके बाद वरदान के रूप में रावण भगवान शिव को लंका चलने को कहते हैं। उनके शिवलिंग को लंका में ले जाकर स्थापित करने का वरदान मांगते हैं। भगवान रावण को वरदान देते हुए कहते हैं कि जिस भी स्थान पर शिवलिंग को तुम रख दोगे मैं वहीं पर स्थापित हो जाऊंगा।

**<u>रावण को रोकने के लिए भगवान विष्णु ने लिया चरवाहे का रूप</u>**

भगवान भोलेनाथ शिवलिंग को लंका लेकर जा रहे रावण को रोकने के लिए सभी देवों के आग्रह पर मां गंगा रावण के शरीर में प्रवेश कर जाती है, जिस कारण उन्हें रास्ते में जोर की लघुशंका लगती है। इसी बीच भगवान विष्णु वहां एक चरवाहे के रूप में प्रकट हो जाते हैं। जोर की लघुशंका लगने के कारण रावण धरती पर उतर जाता है और चरवाहे के रूप में खड़े भगवान विष्णु के हाथों में शिवलिंग देकर यह कहता है कि इसे उठाए रखना जब तक मैं लघुशंका कर वापस नहीं लौट आता।

इधर मां गंगा के शरीर में प्रवेश होने के कारण लंबे समय तक रावण लघुशंका करता रहता है। इसी बीच चरवाहे के रूप में मौजूद बच्चा भगवान भोलेनाथ की शिवलिंग का भार नहीं सहन कर पाता और वह उसे जमीन पर रख देता है। लघुशंका करने के उपरांत जब रावण अपने हाथ धोने के लिए पानी खोजने लगता है और जब उसे कहीं जल नहीं मिलता है तो वह अपने अंगूठे से धरती के एक भाग को दबाकर पानी निकाल देता है, जिसे शिवगंगा के रूप में जाना जाता है। शिवगंगा में हाथ धोने के बाद जब रावण धरती पर रखे

गए शिवलिंग को उखाड़कर अपने साथ लंका ले जाने की कोशिश करता है तो वो ऐसा करने में असमर्थ हो जाता है। इसके बाद आवेश में आकर वह शिवलिंग को धरती में दबा देता है जिस कारण बैधनाथधाम स्थित भगवान शिव की स्थापित शिवलिंग का छोटा सा भाग ही धरती के ऊपर दिखता है। इसे रावणेश्वर बैधनाथ ज्योतिर्लिंग के नाम से भी जाना जाता है।

**सावन के महीने में देवघर में लगता है श्रावणी मेला**

मान्यताओं के अनुसार जो भी भक्त कांधे पर कांवर लेकर सुल्तानगंज (बिहार) से जल उठाकर पैदल भगवान भोलेनाथ के शिवलिंग पर जलाभिषेक करता है उसकी हर मनोकामना पूर्ण होती है, इसीलिए इसे मनोकामना लिंग के रूप में भी जाना जाता है। सावन के महीने में हर दिन लाखों श्रद्धालु की भीड़ सुल्तानगंज से जल उठा कर कांवर में जल भरकर पैदल 105 किलोमीटर की दूरी तयकर देवघर स्थित बैद्यनाथधाम पहुंचकर जलाभिषेक करते हैं। सावन के महीने में देवघर में लगने वाली विश्व प्रसिद्ध श्रावणी मेला देश की सबसे लंबे दिनों तक चलने वाली धार्मिक आयोजनों में से एक है।

**कैसे पहुंचे बैद्यनाथधाम**

देवघर एक प्रमुख तीर्थ स्थान है, यह झारखण्ड राज्य के संथाल परगना के अंतर्गत आता है। इस शहर में बैधनाथ मंदिर स्थित है जो की बारह शिवज्योतिर्लिंग में से एक है इस ज्योतिर्लिंग को मनोकामना लिंग भी कहा जाता है। देवघर हवाई, सड़क और रेल द्वारा देश के अन्य प्रमुख शहरों से अच्छी तरह से जुड़ा हुआहै।

**एयर द्वारा देवघर तक कैसे पहुंचे**

देवघर हवाई अड्डा जिसे बाबा बैद्यनाथ हवाई अड्डे के रूप में भी जाना जाता है, झारखंड राज्य में देवघर की सेवा करने वाला एक घरेलू हवाई अड्डा है। यह मुख्य शहर से लगभग 12 किलोमीटर (7.4 मील) की दूरी पर स्थित है। हवाई अड्डे को मुख्य रूप से झारखंड के उत्तर-पूर्वी भाग और दक्षिण-पूर्वी बिहार के कुछ जिलों की सेवा के लिए विकसित किया गया है। यह देशभर में बैद्यनाथ मंदिर के लाखों तीर्थयात्रियों की अवागमन सुविधाओं को भी पूरी करती है। अप्रैल 2021 इंडिगो को देवघर से कोलकाता, रांची और पटना के लिए उड़ानें संचालित करने के लिए चुना गया था। दिल्ली के लिए उड़ानें 30 जुलाई 2022 को शुरू हुई की गई।

**रेल द्वारा देवघर तक कैसे पहुंचे**

जसीडीह जंक्शन लगभग 7 किमी की दूरी पर मुख्य स्टेशन है और देवघर जिले के देवघर शहर के यातायात सुविधा, शहर की सेवा करनेवाले देवघर के मुख्य शहर से इसे कवर करने में 10 से 15 मिनट का समय लगेगा। यह देश के अन्य शहरों जैसे नई दिल्ली, मुंबई, कोलकाता, रांची, पटना, वाराणसी और भुवनेश्वर आदि से भी अच्छी तरह से जुड़ा हुआ है। एक अन्य स्टेशन बैद्यनाथधाम जंक्शन है जो मुख्य शहर में स्थित है, देवघर में दूसरा स्टेशन है। देवघर स्टेशन मुख्य शहर से 5 किमी की दूरी पर स्थित तीसरा स्टेशन है। यह स्टेशन भागलपुर और दुमका शहरों को देवघर से जोड़ता है।

**रोड से देवघर तक कैसे पहुंचे**

देवघर सारवा से 16 किलोमीटर, सारठ से 36 किलोमीटर, जरमुंडी से 41 किलोमीटर, चंदमारी से 52 किलोमीटर, धनबाद से 132 किलोमीटर, कोडरमा से 148 किलोमीटर दूर है। झारखंड राज्य सड़क परिवहन निगम लिमिटेड, पश्चिम बंगाल राज्य सड़क परिवहन निगम लिमिटेड और कुछ निजी यात्रा सेवाओं के माध्यम से भी जुड़ा हुआ है।

# योग क्या है ?

**'साभार'**

योग आध्यात्मिक, शारीरिक और मानसिक प्रथाओं का एक समूह है जिसकी उत्पत्ति प्राचीन भारत में हुई थी। योग का शाब्दिक अर्थ है जोड़ना। योग शारीरिक व्यायाम, शारीरिक मुद्रा (आसन), ध्यान, सांस लेने की तकनीकों और व्यायाम को जोड़ता है।

इस शब्द का अर्थ ही 'योग' या भौतिक का स्वयं के भीतर आध्यात्मिक के साथ मिलन है। यह सार्वभौमिक चेतना के साथ व्यक्तिगत चेतना के मिलन का भी प्रतीक है, जो मन और शरीर, मानव और प्रकृति के बीच एक पूर्ण सामंजस्य का संकेत देता है। योग के अभ्यास का उल्लेख ऋग्वेद और उपनिषदों में भी मिलता है।

पतंजलि का योगसूत्र (दूसरी शताब्दी ईसा पूर्व), योग पर एक आधिकारिक ग्रंथ है और इसे शास्त्रीय योग दर्शन का एक मूलभूत ग्रंथ माना जाता है।

आधुनिक समय के दौरान और विशेष रूप से पश्चिम में, योग को बड़े पैमाने पर शारीरिक व्यायाम के साथ-साथ ध्यान और मुद्राओं के रुप में अपनाया जा रहा है। हालांकि, योग का उद्देश्य स्वस्थ मन और शरीर से परे है।

**योग, हिंदू दर्शन के षड्दर्शन (छः दर्शन) में से एक है। ये 6 दर्शन – सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त के नाम से जाने जाते हैं।** इन दर्शनों के प्रणेता पतंजलि, गौतम, कणाद, कपिल, जैमिनि और बादरायण माने जाते हैं। इन दर्शनों के आरंभिक संकेत उपनिषदों में भी मिलते हैं।

**योग की उत्पत्ति**

योग की उत्पत्ति की सटीक समय अवधि पर कोई सहमति नहीं है। कुछ शोधकर्ताओं का मानना है कि इसकी उत्पत्ति सिंधु घाटी सभ्यता की अवधि के दौरान हुई, कुछ का कहना है कि यह योग, पूर्वी भारत में पूर्व-वैदिक युग से उत्पन्न हुआ था। कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि इसकी उत्पत्ति वैदिक युग में हुई थी। फिर भी अन्य लोग श्रमण परंपराओं की ओर इशारा करते हैं। मोहनजोदड़ो से प्राप्त पशुपति मुहर से पता चलता है कि एक आकृति मूलबंधासन (योग में बैठने की मुद्रा) में बैठी हुई है, और इसलिए कुछ शोधकर्ता इसे सिंधु घाटी मूल के योग के प्रमाण के रूप में देते हैं। प्रारंभिक बौद्ध ग्रंथों, मध्य उपनिषदों, भगवद गीता आदि में योग की व्यवस्थित व्याख्या की गई है। आधुनिक युग में, रामकृष्ण परमहंस, परमहंस योगानंद, स्वामी विवेकानंद, रमण महर्षि आदि गुरुओं ने पूरे विश्व में योग के विकास और लोकप्रिय बनाने में योगदान दिया। योग शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ऋग्वेद के एक श्लोक में प्रातःकाल में उगते हुए सूर्य देव के लिए हुआ है। हालांकि, ऋग्वेद में यह उल्लेख नहीं है कि यौगिक अभ्यास क्या थे। योग के अभ्यास के शुरुआती संदर्भों में से एक बृहदारण्यक उपनिषद में पाया जा सकता है, जो पहले उपनिषदों में से एक है। हालांकि, योग शब्द समकालीन समय के समान अर्थ के साथ कथा उपनिषद में पाया गया है।

**पतंजलि का योग सूत्र**

योग सूत्र संस्कृत में लिखे गए लगभग 195 सूत्रों या सूक्तियों का संग्रह है। इसकी रचना ऋषि पतंजलि ने योग पर पिछले कार्यों और पुरानी परंपराओं पर चित्रण करते हुए की थी। इसकी रचना 500 ईसा पूर्व और 400 ई के बीच मानी जाती है। इस ग्रंथ में, पतंजलि ने योग को आठ अंगों (अष्टांग) के रूप में वर्णित किया है। वे यम (संयम), नियम (पालन), आसन (योग आसन), प्राणायाम (श्वास नियंत्रण), प्रत्याहार (इंद्रियों को वापस लेना), धारणा (एकाग्रता), ध्यान (ध्यान) और समाधि (अवशोषण) हैं। मध्ययुगीन काल के दौरान, इसका अनुवाद लगभग 40 भारतीय भाषाओं और अरबी और पुरानी जावानीस में भी किया गया था। योगसूत्र को आधुनिक समय में लगभग भुला दिया गया था जब तक कि स्वामी विवेकानंद ने इसे पुनर्जीवित नहीं किया और इसे पश्चिम में ले गए।

**योग को लोकप्रिय बनाने में स्वामी विवेकानन्द की भूमिका** - पिछले करीब 100 वर्षों में योग को वैश्विक स्तर पर एक विशिष्ट पहचान मिली है। और इसका पूरा श्रेय स्वामी विवेकानंद को दिया जाता है। विवेकानंद का राज योग को, योग का पश्चिमी देशों में लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण कदम माना जाता है। स्वामी विवेकानंद के साथ, योगानंद, श्री अरबिंदो आदि ने भी योग को विदेशी धरती पर लोकप्रिय बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

स्वामी विवेकानंद, एक शानदार वक्ता होने के साथ-साथ आध्यात्म की भी गहन समझ रखते थे। उन्होंने पूर्व और पश्चिम के बीच सांस्कृतिक और आध्यात्मिक आदान-प्रदान को सुविधाजनक बनाने के महत्वपूर्ण प्रयास किए।

पतंजलि योग सूत्रों के भाष्य और अनुवाद करने वाले स्वामी पहले भारतीय आचार्यों में से एक थे। स्वामी विवेकानंद ने योग की विशालता को व्यक्त करते हुए राजयोग नामक पुस्तक की प्रस्तावना में लिखा था, "भारतीय दर्शन की सभी रूढ़िवादी प्रणालियों का एक ही लक्ष्य, योग विधि द्वारा पूर्णता के माध्यम से आत्मा की मुक्ति है।"

इसलिए पश्चिम परंपरा में आज भी विवेकानंद के योग प्रचार का गहरा असर दिखाई देता है। उन्होंने योग के प्रति लोगों को आकर्षित करने के साथ-साथ पश्चिमी लोगों में पतंजलि योग सूत्र सीखने के लिए गंभीर रूचि पैदा करने का काम किया था।

**पतञ्जलि योगसूत्र**

पतञ्जलि योगसूत्र, योग दर्शन का मूल ग्रंथ माना जाता है। योगसूत्रों की रचना हजारो साल पहले पतंजलि ने की थी। पतञ्जलि योगसूत्र में चित्त को एकाग्र कर उसे ईश्वर में लीन करने का विधान है। पतंजलि के अनुसार चित्त की वृत्तियों को चंचल होने से रोकना (चित्तवृत्तिनिरोधः) ही योग है। इसका मतलब है कि मन को इधर-उधर भटकने न देना, केवल एक ही वस्तु में स्थिर रखना है।

मध्यकाल में सर्वाधिक अनूदित किया गया प्राचीन भारतीय ग्रन्थ योगसूत्र ही है। जानकारी के मुताबिक योगसूत्र का करीब 40 भारतीय और विदेशी भाषाओं (इनमें प्राचीन जावा और अरबी भी शामिल है) में अनुवाद किया गया था। पतञ्जलि योगसूत्र 12वीं से लेकर 19वीं शताब्दी तक एकदम लुप्त हो गया था, लेकिन विवेकानंद और कुछ अन्य महापुरुषों की वजह से 19वीं- 20वीं और 21वीं शताब्दी में यह ग्रंथ पुनः प्रचलन में आया था।

**योग के प्रकार (Yoga Poses)**

योग शारीरिक और मानसिक चेतना को बढ़ाने में मदद करता है। आधुनिक योग व्यायाम, शक्ति, लचीलापन और श्वास पर ध्यान देने के साथ विकसित हुआ तरीका है। आधुनिक योग की कई शैलियां (Yoga Poses) हैं। योग की विभिन्न प्रकार और शैलियों के बारे में नीचे विस्तार से जानकारी दी जा रही है –

**अष्टांग योग** – यह योग शैली पिछले कुछ दशकों के दौरान सर्वाधिक लोकप्रिय हुई थी। योग के इस प्रकार में, योग की प्राचीन शिक्षाओं का उपयोग किया जाता है। अष्टांग योग, तेजी से सांस लेने की प्रक्रिया को जोड़ता है। इसमें मुख्य रूप से 6 मुद्राओं का समन्वय है।

**विक्रम योग** – विक्रम योग मुख्य रूप से एक कृत्रिम रूप से गर्म कमरे में किया जाता है। जहां का तापमान लगभग 105 डिग्री (105° फारेनहाइट) और 40 प्रतिशत आर्द्रता होती है। इसे हॉट योग (Hot Yoga) के नाम से भी जाना जाता है। इस योग में कुल 26 पोज होते हैं और दो सांस लेने के व्यायाम का क्रम होता है।

**हठ योग** – यह किसी भी योग के लिए एक सामान्य शब्द है, जिसके द्वारा शारीरिक मुद्राएं सीखी जाती है। हठ योग, मूल योग मुद्राओं के परिचय के रूप में काम करता हैं।

**अयंगर योग** – योग के इस प्रकार में विभिन्न प्रॉप्स (सहारा) जैसे कम्बल, तकिया, कुर्सी और गोल लम्बे तकिये इत्यादि का प्रयोग करके सभी मुद्राओं को किया जाता है।

**जीवामुक्ति योग** – जीवामुक्ति का अर्थ है "जीवित रहते हुए मुक्ति।" योगा का यह फार्म साल 1984 के आस पास उभर कर सामने आया था। इसके बाद इसे आध्यात्मिक शिक्षा और योग प्रथाओं को इसमें शामिल किया गया था। जीवामुक्ति योग में किसी भी मुद्रा (पोज) पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय दो मुद्राओं के बीच की गति को बढ़ाने पर ध्यान दिया जाता है। इस ध्यान (फोकस) को विनयसा कहा जाता है। प्रत्येक कक्षा में एक विषय होता है, जिसे योग शास्त्र, जप, ध्यान, आसन, प्राणायाम और संगीत के माध्यम से खोजा जाता है। जीवामुक्ति योग में शारीरिक रूप से तीव्र क्रियाएं की जाती है।

**कृपालु योग** – कृपालु योग, साधक को उसके शरीर को जानने, उसे स्वीकार करने और सीखने की शिक्षा देता है। कृपालु योग के साधक आवक देख कर अपने स्तर का अभ्यास करना सीखते हैं। इसकी कक्षाएं श्वास अभ्यास और शरीर को धीरे- धीरे स्ट्रेच करने के साथ शुरू होती हैं। बाद में विश्राम की एक श्रृंखला भी होती है।

**कुंडलिनी योग** – यहां कुंडलिनी का अर्थ, सांप की तरह कुंडलित होने से है। कुंडलिनी योग, ध्यान की एक प्रणाली है। इसके द्वारा दबी हुई आंतरिक ऊर्जा को बाहर लाने का काम किया जाता है।

**हठ योग क्या है?**

हठ योग मध्य युग (500 – 1500 CE) के दौरान उभरा था। इसी काल में योग की अनेक उप परम्पराओं का भी उदय हुआ था। हठ का अर्थ बल से है और आधुनिक समय में जो अभ्यास किया जाता है वह अनिवार्य रूप से योग का यही रूप है जिसमें शारीरिक व्यायाम, आसन और श्वास अभ्यास पर ध्यान दिया जाता है। हठ योग, योग की बिल्कुल प्रारंभिक प्रक्रिया है, ताकि शरीर ऊर्जा के उच्च स्तर

को बनाए रखने में सक्षम हो सके। हठ योग का वर्णन करने वाला सबसे पुराना ग्रंथ अमृतसिद्धि (11वीं शताब्दी) है।

**साफ्ट पावर के रूप में योग**

साल 2014 में, संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 21 जून को हर साल 'अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस' के रूप में मनाने की घोषणा की थी। यह भारत द्वारा शुरू किया गया था और इसे भारत की सॉफ्ट पावर के प्रसार के रूप में देखा जाता है। भारत की इस पहल के बाद योग को दुनिया के कोने- कोने में प्रोत्साहन मिलने लगा। साथ ही इसमें भारत की अन्य सॉफ्ट पावर के पहलु जैसे भारतीय सिनेमा, आयुर्वेद, वेदांत, शास्त्रीय कला, भारतीय हस्तशिल्प और व्यंजन आदि भी जुड़ गए।

योग का प्रसार करने की भारत की ये मुहिम काफी हद तक सफल रही है जो इस तथ्य से परिलक्षित होती है कि भारत के योग दिवस के प्रस्ताव को दुनिया के 170 से अधिक देशों का समर्थन प्राप्त हुआ है।

भारत सरकार, स्वास्थ्य और कल्याण और आध्यात्मिकता के क्षेत्र में दुनिया में भारत के योगदान को पेश करने के लिए योग की लोकप्रियता और इसके लाभों का उपयोग करने की कोशिश कर रही है।

योग दिवस, हमारे देश के लिए एक बड़ा पर्यटक प्रोत्साहन उत्सव भी हो सकता है, विशेष रूप से उन लोगों के लिए जो विदेश में रहते हैं और अपने देश में योग सीखने और अभ्यास करने के लिए यहां आना चाहते हैं।

योग दिवस समारोह और इस दिशा में सरकार के प्रयासों के पीछे विचार यह है कि मानवता को योग - दुनिया को भारत का उपहार स्वीकार करना चाहिए और उसका जश्न मनाना चाहिए।

योग दिवस ने पूरी दुनिया में योग के प्राचीन भारतीय अभ्यास की लोकप्रियता को भी दुनिया के सामने दिखाया।

- वर्तमान में, दुनिया भर में योग के 300 मिलियन से अधिक अभ्यासी हैं।
- लगभग 50% चिकित्सक भारतीय मूल के हैं।
- योग, स्पेन, अमेरिका, पुर्तगाल, इंडोनेशिया, मोरक्को, यूके, कोस्टा रिका, इटली आदि जैसे विविध देशों में भी बेहद लोकप्रिय है।

**अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस**

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस हर साल 21 जून को मनाया जाता है। आपको बता दें कि 21 जून का दिन साल का सबसे बड़ा दिन होता है और योग भी मनुष्य को दीर्घायु प्रदान करता है। इसलिए इस दिन, योग दिवस मनाया जाता है। पहला योग दिवस 21 जून 2015 को मनाया गया था, जिसकी पहल भारत के प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी नें 27 सितम्बर 2014 को संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपने भाषण से की थी।

इसके बाद 11 दिसंबर 2014 को संयुक्त राष्ट्र के 177 सदस्यों द्वारा 21 जून को, अन्तरराष्ट्रीय योग दिवस के रुप में मनाने के प्रस्ताव को मंजूरी दी गई थी। भारत के पीएम के योग दिवस के प्रस्ताव को 90 दिनों के अन्दर ही पूर्ण बहुमत से पारित कर दिया गया था, जो संयुक्त राष्ट्र संघ में किसी भी प्रस्ताव के लिए सबसे कम समय है।

# सडिका का 75000वाँ कोच

**'संकलन'**

सवारी डिब्बा कारखाना विश्व की सबसे बड़ी रेलवे पैसेंजर रोलिंग स्टॉक निर्माता है, जिसने 1955 में स्थापना के बाद से बहुतायत रूप में कोचों का उत्पादन कर इतिहास रच दिया है। सडिका ने 26 जून, 2024 को 75,000वां कोच के विनिर्माण का आंकड़ा छू लिया। सडिका स्टेनलेस स्टील टाइप मेनलाइन कोच, विस्टाडोम टूरिस्ट कोच, हेरिटेज टूरिज्म और डिफेंस के लिए विशेष कोच, वाइड-बॉडी इलेक्ट्रिकल मल्टीपल यूनिट्स (EMU), मेनलाइन (MEMU), मेट्रो कोच, डीजल मल्टीपल यूनिट्स (DMU), सेल्फ-प्रोपेल्ड एक्सीडेंट रिलीफ ट्रेन (SPART) और सेल्फ-प्रोपेल्ड इंस्पेक्शन कार (SPIC) से लेकर सभी प्रकार के कोच का विनिर्माण करती है। इसने भारत की पहली स्वदेशी सेमी हाई स्पीड ट्रेन सेट जैसे वंदे भारत एक्सप्रेस का सफलतापूर्वक विनिर्माण किया है, जो प्रमुख शहरों के बीच तेज कनेक्टिविटी प्रदान करती है। सडिका बहुत जल्द ही वंदे भारत के स्लीपर वर्सन को भी शुरू करने की तैयारी में है। सवारी डिब्बा कारखाना मुख्य रूप से भारतीय रेलवे के लिए रोलिंग स्टॉक बनाती है, लेकिन यह अन्य देशों को भी रेलवे कोच निर्यात करती है। पहला निर्यात 1967 में थाईलैंड को किया गया था और तब से सडिका ने अफ्रीकी-एशियाई क्षेत्र के 13 से अधिक देशों को 875 कोच निर्यात किए हैं।

कोच विनिर्माण में अग्रणी, सवारी डिब्बा कारखाना पिछले 68 वर्षों से भारत के रोलिंग स्टॉक कार्यक्रम को आगे बढ़ा रही है। सडिका ने हर गुजरते युग के साथ अत्याधुनिक तकनीकों और उत्पादन तकनीकों को अपनाकर खुद को फिर से स्थापित किया है, जिससे यह साल दर साल अपने मानकों को बेहतर बनाने में सक्षम हुआ है।

वर्ष 1957-58 में 74 कोचों की एक छोटी सी शुरुआत से सडिका अब प्रति वर्ष लगभग 3000 कोच का विनिर्माण कर रहा है। यह सोने पर सुहागा वाली बात ही है कि 75000वां कोच वंदे भारत ट्रेनसेट के 69वें रेक का हिस्सा है।

75 साल से भी कम समय में 75000 कोचों का निर्माण अपने आप में एक शानदार उपलब्धि है, लेकिन इससे भी अधिक सुखद यह है कि वे सभी अलग-अलग किस्मों और डिजाइनों के हैं।

सडिका अब वंदे भारत कोचों के विभिन्न प्रकारों जैसे मेट्रो कोच, स्लीपर कोच आदि का विनिर्माण करने के लिए तैयार है, साथ ही साथ नवीनतम तकनीक, सौंदर्य और गुणवत्ता भी ला रहा है।

सडिका ने कोच विनिर्माण में अपनी दक्षता, गुणवत्ता, पर्यावरण और सामाजिक जिम्मेदारी का प्रदर्शन करते हुए कई पुरस्कार जीते हैं।

सडिका के महाप्रबंधक श्री यू. सुब्बा राव ने कोच का निरीक्षण करने के बाद कर्मचारियों को इस शानदार उपलब्धि के लिए बधाई दी।

**राजभाषा विभाग की गतिविधियाँ - 28/06/2024 को राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 153वीं बैठक सडिका के महाप्रबंधक श्री यू.सुब्बा राव की अध्यक्षता में संपन्न हुई। इस बैठक में पिछली तिमाही की राजभाषा संबंधी गतिविधियाँ पर चर्चा की गई तथा रेल रंजनी के 103अंक का विवोचन किया गया।**

# श्री एम. वेंकटेशन, माननीय अध्यक्ष, राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी आयोग ने सडिका का संदर्शन किया और उन्होंने सफाई कर्मचारियों के साथ भी बैठक किया

# श्री जतोथु हुसैन, माननीय सदस्य, राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग ने सडिका का संदर्शन किया और सडिका के महाप्रबंधक तथा अधिकारियों के साथ बैठक किया

## श्री पी.यू.के.रेड्डी, महाप्रबंधक, कोलकाता मेट्रो ने सडिका का संदर्शन किया और कोच का भी निरीक्षण किया।

# 75000वाँ कोच के अंदर का दृश्य

## राजभाषा विभाग/सडिका को नगर राजभाषा कार्यान्वय समिति/चेन्नै द्वारा प्रदान किए गए शील्ड के साथ महाप्रबंधक, मुख्य राजभाषा अधिकारी, वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी और कर्मचारीगण